मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

इस्लामी देशों की कमी

"इस समय सभी इस्लामी देशों में दो ऐसी कमियां हैं जिनको तुरन्त पूरा करना अतिआवश्यक है; एक कमी है मिसाली समाज के अभाव की जो अल्लाह के निकट प्रिय हुआ और अक़ीदे व व्यवहार से लेकर मामलों और जीवन के सभी भागों में वो इस्लामी शिक्षाओं का आइना हो, मनुष्य इस वातावरण में अमन व शांति व दिल के सुकून महसूस करे, ईमानी खुशबू उसके दिल व जान को महका दे।

इस्लामी दुनिया की दूसरी कमी ऐसी ताक़तवर और मोमिनाना दावत व नेतृत्व का अभाव है जिसके अन्दर मर्दानगी का जौहर, बुलन्द निगाही, आला हिम्मती, दूरदर्शिता और अनुमान लगाने की क्षमता के साथ उन बड़ी ताक़तों का सामना करने की योग्यता और क्षमता भी हो जिन्होंने बग़ैर किसी अधिकार के मानवता का नेतृत्व अपने हाथ में ले रखा है और जो इस्लामी देशों और क़ौमों की क़िस्मतों के मालिक बन बैठे हैं।"

(कारवान–ए–ज़िन्दगी – भाग पांच: २६)

DEC 12

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

₹10

हमारी ज़िम्मेदारियां

वर्तमान युग में उम्मत-ए-इस्लामिया जिन ख़तरो से गुज़र रही है वो बहुत ही चिन्तनीय हैं। सबसे पहले उनका सही जायज़ा लेना, फिर उसके आधार पर कार्यप्रणाली और साधन अपनाना समय की सबसे बड़ी मांग है। उम्मत के लोगों को अपने अधिकतर इलाक़ों में जिस स्थिति का सामना है, उसमें उनके इस्लामी अक़ीदे व किरदार को चैलेंज है। इस चैलेंज को सही तौर पर समझने और उसका कामयाब तरीक़े से मुक़ाबला करने में जो कोताही हो रही है उसके नतीजे में उम्मत के लोगों का ईमान व इस्लामी मूल्यों पर स्थिर रहना कम से कम होता जा रहा है, बल्कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में उम्मत के लोगों की एक संख्या अपना इस्लामी परिचय खोती जा रही है। हमारे बुद्धिजीवी व चिन्तकों की ओर से उम्मत के भविष्य की चिन्ता आम तौर पर केवल तमन्नाओं और अपने नेक विचारों से की जा रही है। आम तौर पर उनकी फ़िक्र व कोशिश केवल उम्मत के भौतिक रूप से खुशहाल भविष्य के लिये हो रही है। दुनिया के वर्तमान भौतिकवादी माहौल में उसके दीन व ईमान को जो संगीन ख़तरा पेश आ रहा है इसको हमारे बुद्धिजीवियों और चिन्तक वो अहमियत नहीं दे रहे हैं जो उसको देना चाहिये। देश के अक्सर इलाक़ों में मुसलमानों को उनके ईमान व अख़लाक़ की सलामती और बेहतरी की ओर ध्यान दिलाने की व्यवस्था नहीं है। इसलिये अलग-अलग हैसियतों से ऐसी मिसालें सामने आ रही हैं कि मुसलमान उम्मत में अपने को गिनने वाले लोग कलमा-ए-तौहीद से भी परिचित नहीं है और ये कि उनके काम व तरीक़े शिर्क व गुमराही में पड़े लोगों से भिन्न नहीं हैं बल्कि बहुत सी जगहों पर झूठे खुदाओं की परस्तिश तक कर रहे हैं। ग़ैरुल्लाह के सामने झुकने और उनसे अपनी अमली अक़ीदत का इज़हार करने की मिसालें भी सामने आ रहीं हैं।

ये ऐसी स्थिति है जो इस्लामी ग़ैरत के पक्षधर लोगों की नींद उड़ा दे तो हैरानी की बात नहीं। ये स्थिति आम तौर पर उस समय पेश आती है जब लोगों का सारा ध्यान संसार प्राप्ति की ओर हो जाता है और अपने चिन्तन व मनन में अपने ख़ालिक़ व मालिक की रज़ा की तलब को हावी नहीं रखते। नयी नस्ल जो कि सबसे पहले अपने घर दीनी अक़ीदा और उसके अनुसार दीनी व व्यवहारिक ज्ञान लेकर आगे बढ़ती है, अगर उसको उसके घर से सही बातें बताने की ओर ध्यान न हो तो उसका अपने दीन ईमान से ख़ाली हाथ रहना हैरानी की बात नहीं और फिर जब उसको ग़ैरइस्लामी माहौल मिलता है तो फिर वो उसी रंग में रंग जाता है। इसलिये मुसलमानों के साथ लगभग यही बात हो रही है। उनके घरों का माहौल और मां-बाप का रवैया उनके दीनी मार्गदर्शन से ख़ाली होता जा रहा है। उनको बचपन ही से ऐसा माहौल मिल रहा है जो उन्हें हर ओर से गुमराही में घेर लेता है। आप मुसलमानों के महलों में जाकर देखें आपको आम तौर पर नौजवान और बच्चे बिल्कुल सरफिरे और सदाचार से ख़ाली घूमते और सस्ती तफ़रीहों में पड़े नज़र आयेंगे। और फिर उन नौजवानों और बच्चों को उनकी शिक्षण संस्थाओं में देखें तो अल्लाह व रसूल के स्थान व महानता से अपरिचित और दीनी जानकारी से ख़ाली मिलेंगे और उनकी ग़ैर इस्लामी शिक्षण संस्थाओं की शिक्षा व प्रशिक्षण का उद्देश्य जो कि अधिकतर इस्लाम से बेज़ार कर देने के दृष्टिकोणों पर आधारित होता है, उसकी सराहना करते नज़र आयेंगे।

ये स्थिति अस्ल में स्वंय हमारे बुद्धिजीवियों और मिल्लत के पेशवाओं की नज़र के केवल भौतिकवादी खुशहाली में सीमित रह जाने के कारण से पेश आ रही है और ये स्थिति अल्लाह तआला की नाराज़गी का कारण बनकर उम्मत के लिये मुसीबत का ज़रिया बन सकती है और हमारे चौदह सौ साला इतिहास में ऐसा कई बार हो चुका है कि जब मुसलमानों का समाज इस्लामी मूल्यों व आमाल के लिहाज़ से बहुत ख़राबियों का शिकार हो गया तो इसको अल्लाह तआला की ओर से सज़ा का शिकार होना पड़ा। ये सज़ा कभी ग़ैर क़ौमों की ओर से तबाह करने वाले रवैये के अपनाने की शक्ल में पेश आयी और कभी ज़िल्लत व रुस्वाई की आम मुसीबत के पेश आने की सूरत में आयी। अपने बच्चों के आर्थिक भविष्य की चिन्ता करना कोई ग़लत बात नहीं है लेकिन अपनी चिन्ता व ध्यान केवल इसी में लगा देना बहुत नुक़सान देह काम है और इस काम में हमारी शिक्षा व प्रशिक्षण के ज़िम्मेदार साधारणतय: लिप्त हैं।

मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:१२ दिसम्बर २०१२ ई० वर्ष:४

इस अंक में:

फ़िलिस्तीन की समस्या.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी
मुहर्रम का मुबारक महीना.....३
मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी रह०
हमारा अतीत और वर्तमान.....४
शमसुल हक़ नदवी
माहवारी के अहकाम.....६
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
मीडिया को पक्षपाती नहीं होना चाहिये.....९
मौलाना असरारुल हक़ क़ासमी
शैतान से बचने के कुछ उपाय.....११
मुहम्मद अलाउद्दीन नदवी
अनोखा मुक़द्दमा.....१३
शेख़ अदनान काकाख़ैल
इस्लाम में सुन्नत की अहमियत.....१४
सैय्यद मुहम्मद शाहिद सहारनपुरी
दो अज़ीम नेमतें.....१६
क़ुरआन करीम–ग़ैर मुस्लिमों की नज़र में.....१८
अमरीकी सेना में आत्महत्या का रूझान – एक निरीक्षण..१९
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

संरक्षक

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
अध्यक्ष – दारे अरफ़ात

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादकीय मण्डल

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी
मो० हसन नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

प्रति अंक–10रू वार्षिक–100रू०
सम्मानीय सदस्यता–500रू० वार्षिक

www.abulhasanalinadwi.org
FAX-0535-2211386
E-Mail: markazulimam@gmail.com

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

फ़िलिस्तीन की समस्या

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

धर्मों का इतिहास बताता है कि किसी भी धर्म ने इन्सान को जानवर नहीं समझा और किसी भी इन्सान के साथ चाहे वो किसी भी धर्म से संबंध रखता हो जानवरों जैसा बर्ताव नहीं किया, ख़ास तौर पर धर्म के पेशवाओं और उल्मा ने कभी इन बुराइयों को अच्छा नहीं समझा, जिनको एक आम इन्सान भी बुरा समझता है और इसके लिये किसी तफ़सील में जाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। चोरी–डकैती, दूसरों को अकारण सताना, हक़ मारना, कष्ट पहुंचाना, अकारण जुल्म करना, ये वो बुराइयां है जिनको हर इन्सान बुराई समझता है, इनकी निंदा की जाती है और जहां तक हो सकता है इसे रोकने की कोशिश की जाती है और समाज को इनसे पाक करने के लिये प्रयास किये जाते हैं, कोई भी इन बुराइयों को अपनाने की दावत नहीं देता, लेकिन दुनिया में एक ऐसी क़ौम है जिसके आम लोगों ने नहीं बल्कि उल्मा और दीन के ज्ञानियों ने इन बुराइयों की न केवल ये कि इजाज़त दी है और उसकी खुली छूट दी बल्कि उसकी दावत देने वाले बन गये, इस क़ौम के बड़े–बड़े हाख़ामात (ज्ञानी) इन बुराइयों को करके गर्व के साथ बयान करते हैं और इसी को उन्होंने अपने लिये उन्नति का साधन समझ लिया है।

यहूदी एक ऐसी क़ौम है जिसकी मक्कारियों व शैतानियों से पश्चिमी देश भी तंग आ चुके हैं, जो स्वंय व्यवहारिक दीवालियेपन का शिकार हैं, एक लम्बी मुद्दत तक ये क़ौम पश्चिमी क़ौमों के लिये एक गंभीर समस्या बनी हुई थी, आख़िर उन्होंने अपना पीछा छुड़ाने के लिये "इस्राईली साम्राज्य" का उपाय प्रस्तुत किया, और फिर अरबों की धरती में 1917ई0 में खुफ़िया तौर पर यहूदियों ने क़दम जमाने शुरू किये। 1920 ई0 के बाद बाक़ाएदा अंग्रेज़ों की सरपरस्ती में वहां यहूदियों को आबाद करने का सिलसिला शुरू हुआ। 1939 ई0 में उनकी संख्या 6 लाख के क़रीब पहुंच गयी। 1948ई0 में बाक़ाएदा "इस्राईली शासन" की स्थापना की घोषणा कर दी गयी और यहूदियों ने कई अरब रियासतों पर क़ब्ज़ा करके अपनी हुकूमत क़ायम कर ली। इस प्रकार फिलिस्तीन की धरती पर एक ऐसा नासूर असितत्व में आ गया जिसने न जाने कितने घरों को वीरान किया, और वही यहूदी जो पीढ़ित होने का रोना रो रोकर वहां आबाद हुए थे उन्होंने जुल्म की वो सारी हदें पार कर लीं जिसकी चर्चा भी रोंगटे खड़े करने के लिये पर्याप्त हैं। बड़ी मशक्क़त के बाद फ़िलिस्तीन की एक छोटी सी पट्टी (ग़ाज़ा) मुसलमानों के हवाले कर दी गयी, लेकिन वो भी इस्राईल की नज़रों में वो लगातार खटक रही है और वहां के लोगों पर हर प्रकार के आर्थिक व सामाजिक पाबन्दी लगाकर उनका जीवन नर्क कर दिया है। वहां के पीड़ित लोगों पर इस्राईली दरिन्दगी रोज़ाना की बात बन चुकी है। न औरतों की इज़्ज़तें सुरक्षित रहती हैं और न मासूम बच्चों की ज़िन्दगियां सुरक्षित हैं। अबू ग़रीब की जेल में सैकड़ों बेगुनाह अमानवीय, शर्मनाक कष्टों का सामना कर रहें हैं लेकिन किसी के मुंह से हमदर्दी के दो बोल भी नहीं निकलते हैं।

इस्राईल के पास हर प्रकार के घातक हथियार हैं, ख़तरनाक हथियार और बम हैं, रिपोर्टों के अनुसार इस्राईल एटमी ताक़त से भी लैस हो चुका है और यही वो जंगी जुर्म थे जिन्हें आधार बनाकर अमरीका ने ईराक़ को नष्ट किया था। लाखों लोग मौत के घाट उतार दिये गये, शहर के शहर वीरान कर दिये गये और पूरा देश बारूद की लपेट में चला गया जिससे वो आजतक निकल नहीं सका, जबकि इस्राईल न केवल इन हथियारों से लैस है बल्कि इनका बेहिचक प्रयोग भी कर रहा है, वो अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून को अपने पैरों तले रौंद रहा है, लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी में विरोध की हिम्मत नहीं, वो ख़ामोश तमाशाई बनी हुई है, और सुपर पावर उसकी सरपरस्ती कर रहा है, उसे इसके सिवा और क्या कहा जा सकता है कि वो फ़िलिस्तीन की समस्या को और गंभीर करना और हर हाल में इस्राईल का साथ देना चाहते हैं।

आज अमरीका, इस्राईल और यूरोप का ऐसा त्रिकोण तैयार हो चुका है जो पूरी दुनिया को अपनी लपेट में ले लेना चाहता है, इनके यहां व्यवहार व मानवमूल्यों की कोई क़ीमत नहीं, न उनको हीरोशिमा और नागासाकी पर बम बरसाने में कोई लाज आयी, न ईराक़ व अफ़ग़ानिस्तान की धरती को लहूलुहान कर देने से उनके माथे पर कोई बल नहीं पड़ा, और न फ़िलिस्तीन के निहत्थे मुसलमानों पर मिज़ाइल बरसाने में इनको कोई शर्म है।

लेकिन ये हालात हमेशा रहने वाले नहीं हैं, आज नहीं तो कल हालात ज़रूर बदलेंगे, और उस वक़्त सभी मुजरिमों को उनके जुर्म की सज़ा मिलेगी।

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी रह०

मुहर्रम का मुबारक महीना

चांद की सालाना गर्दिश एक बार फिर अपना चक्कर पूरा कर चुकी है। इस्लामी जन्तरी में "कुर्बानी" का मुबारक महीना और मुबारक दिन गुज़र चुका और "शहादत" का मुबारक महीना और मुबारक दिन आ पहुंचा। ईद कुर्बा का महीना अगर इसलिये था कि आप अपना सब कुछ हक़ की राह में लुटा दें तो मुहर्रम का महीना ये पैग़ाम लाता है कि आप खुद अपने को शहादत के लिये पेश कर दें। पिछला महीना "आप से" मांग रहा था। अगला महीना "आप को" मांग रहा है। दुनिया की एक बहुत ही ज़बरदस्त, अत्याचारी व शासन के जीवन की नांव इसी महीने की 10 तारीख़ को नील नदी में गर्क़ हो गयी। मूसा अलै0 की मज़लूम क़ौम को मूसा व हारून अलै0 के रब ने इसी मुबारक तारीख़ को आज़ादी दिलायी और अल्लाह के कलीम मूसा अलै0 ने इस आज़ादी के दिन की भविष्य की यादगार आशूरा के रोज़े के तौर पर क़ायम कर दी। दुनिया के सबसे बड़े हादी (हिदायत करने वाला), सबसे बड़े शिक्षक और सबसे बड़े आज़ादी दिलाने वाले ने इस पाक दिन की पाक यादगार को यही नहीं कि जायज़ रखा हो बल्कि खुद भी पाबन्दी के साथ रोज़ा रखा और अपनी उम्मत को भी इसकी ताकीद फ़रमायी।

हिजरत–ए–नबवी स0अ0 के आधी सदी बाद इतिहास ने फिर स्वंय को दोहराया। इसी महीने की इसी तारीख़ को, करबला की सरज़मीन पर सच और झूठ, बादशाहत व हैवानियत के बीच एक बार फिर जंग हुई। एक ओर दौलत थी, शासन था, साम्राज्य था, भौतिकवादी शक्तियां थीं, शाही ख़ज़ाना था, शाही फ़ौज थी, हज़ारों सिपाहियों से सुसज्जित सेना थी, ताक़त का नशा था, साम्राज्य स्थापित करने की धुन थी। दूसरी ओर ग़रीबी थी, फ़क़ीरी थी, फ़क़र व फ़ाक़ा था, कर्तव्यपराणयता का भाव था, हक़परस्ती से भरे हुए कुछ दिल थे, दिलों के अन्दर हक़ की राह में मिटने और मिट जाने का बेताब कर देने वाला भाव था। बातिल के आगे न झुकने वाली कुछ गर्दनें थीं। लाशें तड़पीं और जिस खून का एक–एक क़तरा परवर दिगारे आलम की नज़र में दोनों जहानों की मौजूदा चीज़ों से ज़्यादा क़द्र व क़ीमत रखता था, उसकी नदियां बहीं! मूसा अलै0 की उम्मत ने सब कुछ झेलकर आशूरा मुहर्रम को अपनी आज़ादी हासिल की थी। अल्लाह के हबीब स0अ0 के नवासे रज़ि0 ने खुद अपनी जान देकर आज़ादी व खुशी हासिल कर ली।

मूसा कलीमुल्लाह अपनी सारी उम्मत के साथ वतन से बेवतन होकर आशूरा मुहर्रम का इस्तिक़बाल किया था। सरवर–ए–आलम स0अ0 रोज़ा व इबादत के साथ इसको मनाते थे। हुसैन बिन अली रज़ि0 ने अपने अज़ीज़ों और बेटों के साथ खुद अपनी जान देकर रोज़े सईद की पेशवाई की। अब बात ये है कि आप किसी तरीक़े पर इस तारीख़ की पेशवाई के लिये आमादा हैं।

बांस की तीलियों पर खुशनुमा काग़ज़ मढ़ना, इन काग़ज़ी इमारतों पर तेल–बत्ती जलाना, ढोल–ताशा बजाना, क्या यही आशूरा व मुहर्रम के स्वागत की चीज़ है? आपके दिल का गढ़ा हुआ मुहर्रम आख़िर किसका है? क्या इब्राहीम ख़लील का? क्या मूसा कलीम का? क्या आख़िरी नबी का? क्या अबूबक्र रज़ि0 व उमर रज़ि0 व उस्मान रज़ि0 व अली रज़ि0 का? क्या हसन–हुसैन, ज़ैनुल आबदीन, जाफ़र सादिक़ का? क्या अबू हनीफ़ा रह0, शाफ़ई रह0, मालिक रह0, व अहमद रह0 का? क्या हसन बसरी रह0, जुनैद रह0, शेख़ जीलानी रह0, व ख़्वाजा अजमेरी रह0 का? आख़िर कुरआन व हदीस, फ़िक़ व तसूफ़, शरीअत व तरीक़त, कहीं से भी आपको इसकी इजाज़त मिलती है कि इस्लाम के इतिहास की इतनी महत्वपूर्ण तारीख़ को आप इस बेदर्दी के साथ अपनी नफ़्स की ख़्वाहिश पूरा करने में ख़र्च कर दें?

हमारा अतीत और वर्तमान

शमसुल हक़ नदवी

दुनिया की दूसरी क़ौमों ने अपना इतिहास ख़ुद से गढ़ा है और इसके लिये फ़र्ज़ी हीरो तैयार किये हैं। व्यक्ति व अफ़साने तैयार किये हैं, किन्तु हमारा इतिहास हक़ीक़त है। हमारा इतिहास ऐसे अनगिनत मानवताप्रेमियों और शेर दिल इन्सानों से भरा पड़ा है कि दुनिया की दूसरी क़ौमें वैसे व्यक्ति प्रस्तुत करने में असमर्थ हैं। हमारे इतिहास में ऐसे अच्छे नक़्श हैं जो मुर्दों की मसीहाई करते हैं, इन्सान के मुर्दा तन में जान डाल देते हैं। इसलिये कि उनमें सलाह व ख़ैर का भाव है, आत्मविश्वास है हक़ीक़त की रूह है न कि दास्ताने व अफ़साना बाज़ी है।

इब्ने असाकिर और दूसरे लेखकों ने लिखा है कि जब रोमी सेना इस्लामी सेना के सामने पराजित होने लगी तो हेरक़्ल बहुत घबराया और अपने देश के बुद्धिमानों और बड़े–बड़े लोगों को बुलाकर उनसे कहने लगा कि तुम पर लानत है क्या ये लोग जो तुमसे लड़ रहे हैं वो तुम्हारे ही जैसे इन्सान नहीं हैं? हेरक़्ल की बातें सुनकर उन लोगों ने जवाब दिया कि जी हां, हैं तो हमारे ही जैसे इन्सान, फिर उसने पूछा कि क्या वो ज़्यादा हैं या तुम लोग? उस समय उन लोगों ने जवाब दिया कि हम लोग उनसे हर हैसियत में ज़्यादा हैं, हेरक़्ल ने कहा कि फिर क्या बात है कि जब भी तुम उनसे लड़ते हो पराजित हो जाते हो, हेरक़्ल की बात सुनकर उन लोगों ने झुंझलाकर सर झुका लिया। लेकिन उन लोगों में से एक बूढ़े व्यक्ति ने हिम्मत की और हेरक़्ल से कहा, "क्या आप वाक़ई इसका कारण मालूम करना चाहते हैं" उस बूढ़े ने कहा कि वो हम पर इसलिये हावी हो जाते हैं कि रात को तो इबादत गुज़ार होते हैं, नमाज़ पढ़ते हैं और दिन में रोज़े रखते हैं, वो जो वादा करते हैं उसको पूरा करते हैं, भलाई का हुक्म देते हैं और बुराई से रोकते हैं, आपस में एक दूसरे के लिये भलाई करते हैं, बग़ैर किसी मुक़द्मा व अदालत के एक–दूसरे के साथ न्याय करते हैं और हमारा ये हाल है कि हम शराब पीते हैं, ज़िना करते हैं और हराम काम करते हैं, जो वादा करते हैं उसको पूरा नहीं करते, हम ग़रीबों व मोहताजों पर गुस्सा होते हैं और उस पर जुल्म करते हैं, ख़ुदा को नाराज़ करने वाली बातों का हुक्म देते हैं और उसको ख़ुश करने वाली बातों से रोकते हैं, हम ज़मीन में फ़साद व बिगाड़ पैदा करते हैं।

इस बूढ़े की बातों को सुनकर हेरक़्ल ने कहा तुम ठीक कहते हो, हेरक़्ल ने एक दूसरे व्यक्ति से जो कुछ दिनों तक मुसलमानों के पास क़ैद रहा था कहा तुम उन लोगों (यानि मुसलमानों) के बारे में बताओ वो कैसे हैं, तुमने वहां क्या देखा? उस क़ैदी ने कहाः "हम उनके दिन व रात का तुम्हारे सामने ऐसा नक्शा ख़ींचेगे, जैसे तुम उन्हें देख रहे हो। वो दिन में घुड़सवार और रात में इबादत गुज़ार होते हैं, अपने अधीन रहने वालों से ख़रीदे बग़ैर कोई सामान नहीं खाते, जब किसी के पास जाते हैं तो सलाम किये बग़ैर उसके पास नहीं जाते, जिनसे जंग करते हैं इस तरह करते हैं कि जम कर करते हैं कि पराजित कर देते हैं।"

उस क़ैदी ने जिसने मुसलमानों को बहुत क़रीब से देखा था, हेरक़्ल के सामने उनका ऐसा नक़्शा खींचा कि वो हैरान रह गया, उस पर ऐसा ख़ौफ़ तारी हुआ कि चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं, डर के मारे क़दम उठाना मुश्किल हो गया, कलेजा थाम कर बैठ गया वो ये समझ गया कि ऐसे लोग कभी पराजित नहीं हो सकते। रोमी सेना के जत्थे उनके सामने टिक नहीं सकते। इसलिये इसने इस क़ैदी से कहा कि तुमने जो विशेषतांए बयान कीं अगर वो सही हैं तो एक दिन वो हमारे तख़्त व ताज पर क़ब्ज़ा करके रहेंगे। फिर जब रोमियों को पराजय पर पराजय हुई तो एक दिन वो सीरिया के एक टीले पर खड़ा हुआ और सीरिया को ख़ैराबाद कहते हुए उसने कहा, सीरिया! तुझे मेरा आख़िरी सलाम! जिसके बाद फिर तुझसे मिलना न होगा, अलविदा ऐ सीरिया अलविदा! आज के बाद जो रोमी भी यहां आयेगा ख़ौफ़ज़दा व होश व हवास खोये हुए होगा।

मुसलमानों ने अपने व्यवहार से दुनिया को जीता था। इस क़ौम के हालात अजीब व ग़रीब हैं जिसने अपने ख़ुदा से मदद मांगी और दृढ़ता के साथ इस्लामी मूल्यों पर स्थापित रही। इसने दुनिया को अपने हथियार व ताक़त से जीतने के बजाये अपनी व्यवहार कुशलता से और अच्छी आदतों से जीता, वो देशों के क़िलों में प्रवेश करने और शहर की पनाहों को तोड़ने से पहले वहां के लोगों के दिलों में दाख़िल हुए। सारी दुनिया में उनका डंका बजने लगा और वो ज़मीन पर रहने वाली क़ौमें और बादशाह उनसे भयभीत हो गये।

जब मुसलमानों ने किसरा के शहरों को जीता और

अरब के बहादुर अजम की धरती पर प्रविष्ट हुए तो उनके बादशाह यज़्दगर्द ने चीनी बादशाह के पास अपना दूत भेजा और उससे अरबों के ख़िलाफ़ मदद मांगी, उस समय बादशाहों का ये दस्तूर था कि नाज़ुक मौक़े पर एक बादशाह दूसरे बादशाह की मदद करता था। यज़्दगर्द का ये दूत जब चीन से वापिस हुआ तो हदिया व तोहफ़ों से लदा–फ़ंदा वापिस हुआ और यज़्दगर्द से कहा कि बादशाह–ए–चीन ने मुझसे उन लोगों के हालात पूछे जो हमारे देश पर क़ब्ज़ा किये हुए हैं, जब मैंने उनको तफ़सील बतायी तो उसने कहा कि तुम उनकी संख्या कम और अपनी ज़्यादा बताते हो, इतनी कम सख्या इतनी अधिक संख्या पर उसी समय हावी हो सकती है जब उनमें खूबियां हों और तुममे बुराइयां और ख़राबियां हों।

मैंने अर्ज़ किया आप और कुछ पूछना चाहें तो पूछें, मैं आपको बताऊगां। तब चीन के बादशाह ने कहा कि क्या वो वादा करने के बाद वादा पूरा करते हैं? मैंने कहा जी हां, फिर उसने पूछा कि वो लोग तुमसे लड़ने से पहले तुमसे क्या कहते हैं? मैंने कहा कि वो तीन बातों में से कोई एक बात मन्जूर करने के लिये कहते हैं। पहली बात तो ये है कि हम उनके दीन की पैरवी करें, अगर हम उसको मान लें तो वो हमको अपने तरीक़े पर चलाते हैं और फिर हमारे भी वही अधिकार होंगे जो उनके हैं और हम पर भी वही ज़िम्मेदारी होगी जो उन पर है। दूसरी बात ये है कि जिज़या दें, ये भी मन्जूर न हो तो फिर जंग की दावत देते हैं।

उसके बाद बादशाह ने पूछा कि अपने सरदारों की इताअत के मामले में वो कैसे हैं? मैंने जवाब दिया कि कोई क़ौम अपने अकाबिर और रहबर की इताअत की जो बेहतर से बेहतर मिसाल पेश कर सकती है, वो इस तरह अपने अमीर की इताअत करते हैं। फिर बादशाह ने पूछा कि वो कौन–कौन सी चीज़ों को हलाल समझते हैं और किन चीज़ों को हराम?

दूत ने कहा कि मैंने बादशाह को जवाब दिया कि वो लोग ख़बीस व फ़हश चीज़ों को हराम क़रार देते हैं, गुमराही की हर बात को और हर क़िस्म के शर और नापसंदीदा चीज़ों को हराम क़रार देते हैं। ये सुनकर बादशाह ने सवाल किया कि वो लोग किस चीज़ को हराम क़रार देने के बाद फिर उसको हलाल करते हैं या हलाल की हुई चीज़ को बाद में हराम समझते हैं?मैंने जवाब दिया नहीं, बल्कि उनका अक़ीदा है कि उनकी शरीअत सम्पूर्ण है। खुदा उनकी शरीअत का रक्षक है। वो ज़मीन व आसमान से भी ज़्यादा क़ायम व साबित रहने वाली चीज़ है। उनका ये उसूल है कि खुदा की नाफ़रमानी करके किसी मख़लूक़ की इताअत व फ़रमाबरदारी कुबूल करना हराम व नाजाएज़ है।

ये सारी तफ़सीलें सुनने के बाद चीन के बादशाह ने कहा कि ये लोग कभी मिट नहीं सकते जब तक कि वो हराम को हलाल न समझने लगें और उनके नज़दीक भी नाखूब–खूब बन जाये और भली व नेक बात को बुरी व घटिया सोचने लगें। इसके बाद शाहे चीन ने फ़ारस के दूत से अरबों के लिबास के संबंध में पूछा तो उसने उसको बताया कि वो लोग कहते हैं कि सबसे अच्छा लिबास तक़वा व खुदा का ख़ौफ़ है।

(तक़्वे का लिबास सबसे अच्छा लिबास है)

फिर उसने कहा कि उनकी सवारियां कैसी होती हैं? दूत ने जवाब दिया अक़्ल व मशवरा, उनका मशहूर जुम्ला है कि जिसको अपनी राय व समझ–बूझ पर नाज़ हो वो मारा गया और जिसने अपनी बुद्धि के घमन्ड में दूसरे से बेनियाज़ी बरती वो ग़लती से बचा नहीं। बादशाह ने फिर सवाल किया, तुम्हें उनके आपस के मामलात व रहन–सहन के संबंधित क्या जानकारियां हैं? दूत कहता है कि मैंने बादशाह को जवाब दिया कि उनके रसूल स0अ0 ने उन्हें जो शिक्षा व हिदायत दी हैं वो उसके पाबन्द होते हैं वो ये कि उनमें से अगर कोई व्यक्ति किसी से ख़फ़ा व नाराज़ हो तो उस नाराज़गी के कारण उस पर जुल्म न करे, वो अगर किसी का दोस्त हो तो मुहब्बत के कारण किसी गुनाह का करने वाला न हो। सुबूत मिले या न मिले हक़ को स्वीकार करे। कोई नेकी करना चाहे तो उसे उसमें लालच का शुब्हा न हो। जब शाहे चीन ने अरबों से संबंधित ये सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली तो यज़्दगर्द को निम्नलिखित विषय का ख़त लिखा।

"अगर मैं चाहूं तो तुम्हारी मदद के लिये ऐसा ज़बरदस्त लश्कर भेजूं जिसका एक सिरा तुम्हारे देश "मुरू" में हो और दूसरा सिरा चीन में मगर आपके दूत ने मुसलमानों के जो हालात बयान किये हैं वो ऐसे हैं कि उनके सामने पहाड़ भी कम हैं, अगर उन्हें रास्ता मिल जाये तो उन खूबियों के होते हुए जो आपके दूत ने बयान की हैं, ये लोग हमारा भी तख़्त व ताज छीन लेंगे। ये स्थिति सेना भेजने के विपरीत है, उनसे आप सुलह कर लें, इसके सिवा और कोई चारा नहीं।" (शेष पेज 8 पर)

माहवारी के अहकाम

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

माहवारी का शाब्दिक अर्थ 'बहने' का है और शरीअत की इस्तलाह में माहवारी उस खून को कहते हैं जो गर्भ से विशेष समय में निकलता है। माहवारी का निकलना औरत के लिये एक स्वाभाविक काम है। इसका बहना औरत के व्यस्क होने से शुरू होता है और बड़ी उम्र तक जारी रहता है। व्यस्कता नौ साल की उम्र में हो सकती है इससे पहले नहीं हो सकती। ये हो सकता है कि नौ साल पूरे होने के कुछ साल बाद व्यस्क हो। इसका दारोमदार वातावरण पर होता है, बड़ी उम्र की मुद्दत अहनाफ़ के यहां 55 साल है।

माहवारी का समयः माहवारी का कम से कम और अधिक से अधिक समय अहनाफ़ के यहां निश्चित है। इसकी कम से कम मुद्दत तीन दिन है अगर तीन दिन से कम खून आये तो ये माहवारी का खून नहीं समझा जायेगा और उससे माहवारी के नियम संबंधित नहीं होंगे। इसी प्रकार माहवारी का अधिक से अधिक समय दस दिन का है, अगर इसके बाद भी खून जारी रहे तो ये माहवारी का खून नहीं होगा और इससे माहवारी के नियम संबंधित नहीं होगें। इसलिये दारे कुतनी ने हज़रत अबू उमामा बाहिली रज़ि0 के वास्ते नबी करीम स0अ0 की रिवायत नक़ल की है कि आप स0अ0 ने फ़रमाया, "कुंवारी और विवाहिता दोनों के माहवारी का कम से कम समय तीन दिन है और अधिक से अधिक दस दिन है और जो खून दस दिन से बढ़ जाये वो बीमारी का खून है।"

इसी की हम मानी रिवायत हज़रत वासिला बिन अस्क़ा रज़ि0 की भी है।

पाकी की मुद्दतः दो माहवारी के बीच ज़्यादा से ज़्यादा मुद्दत की कोई सीमा तय नहीं है, जब तक खून न आये औरत पाक रहेगी, लेकिन इस पाकी की कम से कम मुद्दत पन्द्रह दिन निश्चित है। इस मुद्दत का पूरा होना ज़रूरी है। अगर किसी माहवारी के बाद पन्द्रह दिन पूरे होने से पहले खून आने लगे तो उसे माहवारी नहीं माना जायेगा न ही उससे माहवारी के नियम संबंधित होंगे।

माहवारी के नियमः माहवारी से कई नियम संबंधित हैं, नीचे कुछ की तफ़सील दी जाती है।

1– जिस औरत को माहवारी आ रही हो उस पर नमाज़ पढ़ना और रोज़ा रखना हराम है। अगर वो नमाज़ पढ़ ले या रोज़ा रख ले तो शरीअत के हिसाब से उसका कोई एतबार नहीं होगा बल्कि वो शरीअत के ख़िलाफ़ काम करने के कारण गुनहगार होगी। इसलिये बुख़ारी की रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने हज़रत फ़ातिमा बिन्ते हुबैश रज़ि0 से फ़रमायाः "जब माहवारी आ जाये तो नमाज़ छोड़ दो।" इसी तरह बुख़ारी की एक रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने एक मौक़े पर फ़रमायाः "क्या ये नहीं है कि जब औरत को माहवारी आ जाती है तो वो नमाज़ रोज़ा नहीं करती।"

फिर जब माहवारी का ज़माना ख़त्म हो जाये तो औरत रोज़े की क़ज़ा कर ले, नमाज़ की क़ज़ा नहीं करेगी, इसलिये कि माहवारी के दिनों में नमाज़ो को औरत पर माफ़ कर दिया है। इसलिये बुख़ारी में हज़रत आयशा रज़ि0 से रिवायत है, वो फ़रमाती हैंः "आंहज़रत स0अ0 के ज़माने में हमें माहवारी आ जाती थी, तो हमें रोज़े की क़ज़ा का हुक्म दिया जाता था, नमाज़ की क़ज़ा का हुक्म नहीं दिया जाता था।"

2– जिस औरत के माहवारी आ रही हो उसके पति पर विशेष संबंध स्थापित करना हराम है यहां तक की माहवारी समाप्त हो जाये और वो नहा ले। इसकी व्याख्या खुद कुरआन मजीद में मौजूद है, अल्लाह तआला का इरशाद हैः "वो लोग आपसे माहवारी का हुक्म पूछते हैं, फ़रमा दीजिये कि वो गंदगी है, लिहाज़ा तुम लोग माहवारी के समय औरतों से अलग रहो और जब तक पाक न हो जायें, उनके नज़दीक न जाओ, फिर जब खूब पाक हो जांए तो उनके नज़दीक जाओ, जहां से अल्लाह ने तुमको हुक्म दिया है, बेशक अल्लाह को तौबा करने वाले पसंद आते हैं, और गंदगी से बचने वाले पसंद आते हैं।" (सूरह बक़रहः 222)

आयत में अलग रहने का मतलब लैंगिक संबंधों को समाप्त करना है और खूब पाक हो जाने का मतलब नहा लेना है।

3– इस हालत में विशेष संबंध हराम है लेकिन नाफ़ और उसके ऊपर के अंगों से आनंद प्राप्त करने में कोई हर्ज नहीं है। इसी तरह गुठने के नीचे वाले अंगों से भी। उन अंगों से आनंद प्राप्त करने के लिये किसी बाधा का होना भी शर्त नहीं है। जबकि नाफ़ और गुठने के बीच के अंगों से आनन्दित होना उसी समय सही है बीच में कपड़ा हो और विशेष संबंध स्थापित न किया जाये लेकिन एहतियात यही

है कि ऐसा न करे। वरना सीमा लांघने का भय रहता है। ये आदेश अलग–अलग हदीसों से लिये गये हैं, इसलिये मुस्लिम की रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमाया: "औरतों से माहवारी के समय में लैंगिक संबंध स्थापित करने के अतिरिक्त और हर कुछ कर लिया करो।"

और हज़रत आयशा रज़ि0 से रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 का हुक्म था कि जब कोई औरत माहवारी की हालत में हो तो नारे को अच्छी तरह बांध ले फिर उसका पति उसके साथ लेट सकता है।

हज़रत आयशा रज़ि0 की दूसरी रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 बीवियों में से किसी से माहवारी की हालत में इस तरह मिलते थे कि आधे गुठने तक चादर पड़ी होती थी।

4– माहवारी के समय औरत के लिये काबे का तवाफ़ मना है इसलिये कि बुख़ारी की रिवायत में आंहज़रत स0अ0 ने इससे मना फ़रमाया है।

5– माहवारी के समय औरतों के लिये कुरआन करीम की तिलावत जाएज़ नही है। न कुरआन देखकर न ज़बानी, इसलिये तिरमिज़ी की रिवायत है: माहवारी के समय औरत कुरआन का कुछ भी नहीं पढ़ेगी। जबकि अल्लामा हिसकफ़ी फ़रमाते हैं अगर कुरआन की आयत दुआ की नियत से या हम्द की नियत से या तालीम देने के लिये पढ़े और एक–एक शब्द को अलग अलग करे तो सही क़ौल के अनुसार जायज़ है।

6– अगर कोई औरत अध्यापिका है तो वो माहवारी के समय में कुरआन व तफ़सीर (व्याख्या) इत्यादि पढ़ा सकती है। लेकिन कुरआन पढ़ते समय एक बार में पूरी आयत नहीं पढ़ेगी। बल्कि एक–एक शब्द को अलग–अलग करके पढ़ेगी। इसी तरह कुरआन मजीद को किसी चीज़ के बिना नहीं पकड़े। हां ग़िलाफ़ में रखे हुए कुरआन को छुए तो जाएज़ है। इसलिय नबी करीम स0अ0 का इरशाद है: "कुरआन को सिर्फ़ पाकी की हालत मे छुए।"

7– माहवारी की हालत में औरतों के लिये मस्जिद जाना या बैठना मना है। आंहज़रत स0अ0 का इरशाद है: "मैं किसी ऐसी औरत को जो माहवारी की हालत में हो मस्जिद जाना जाएज़ नहीं करता।"

8– माहवारी की हालत में औरतों को तलाक़ देना हराम है। ऐसे समय में तलाक़ दी जाये जिसमें उनसे संबंध न स्थापित किया गया हो।

9– माहवारी खत्म होने के बाद नहाना फ़र्ज़ है। इसका ज़िक्र कुरआन मजीद में भी है और हदीसों में भी है।

10– अगर माहवारी ऐसे समय में समाप्त हो जबकि नमाज़ का आख़िरी समय हो तो इस स्थिति में अगर इसकी कोई आदत है या दस दिन से कम में माहवारी का खून बन्द हुआ है और इतना समय बाक़ी है कि वो नहा करके तहरीमा बांध सके, तो उस पर उस समय की नमाज़ फ़र्ज़ है और न अदा करने की हालत में उसकी क़ज़ा ज़रूरी है।

और अगर दस दिन के बाद खून बन्द हुआ हो तो चाहे नहाने या तहरीमा के लिये समय बाक़ी हो या न हो ये नमाज़ वाजिब हो जायेगी और उसकी क़ज़ा करना ज़रूरी होगा। इसलिये कि बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबू हुरैरा रज़ि0 की रिवायत है कि जो नमाज़ की एक रकअत पा ले उसने नमाज़ (का वक़्त) पा लिया।

11– अगर किसी फ़र्ज़ नमाज़ का समय हो गया, किसी औरत ने अभी ये नमाज़ नहीं पढ़ी थी कि उसे खून जारी हो गया तो ये नमाज़ उससे साक़ित हो जायेगी चाहे ऐसा नमाज़ के आख़िरी वक़्त में ही क्यों न हुआ हो। (हिन्दिया 1/37)

12– अगर रमज़ान में फ़ज्र से पहले खून बन्द हो गया तो औरत रोज़ा शुरू कर देगी, चाहे उसने अभी नहाया न हो। क्योंकि इस वक़्त में रोज़ा रखने की मोमानियत नापाकी के निकलने की वजह से है, और जब ये सिलसिला ख़त्म हो गया तो उसके बाद रोज़ा रखना ज़रूरी हो गया चाहे औरत नहा चुकी हो या नहीं।

13– ऊपर गुज़र चुका है कि माहवारी की हालत में संबंध स्थापित करना हराम है। लेकिन अगर कोई इसे तोड़ बैठे तो उसे तौबा करनी चाहिये और मुस्तहब ये है कि कुछ सदक़ा कर दे। इसीलिये तिरमिज़ी की रिवायत है कि जब मर्द औरत से माहवारी की हालत में विशेष संबंध स्थापित कर ले अगर लाल खून आ रहा हो तो एक दीनार और पीला आ रहा हो तो आधा दीनार सदक़ा करे।

14– अगर गर्भावस्था में खून जारी हो जाये या पैदाइश से पहले खून आ जाये तो उसे न प्रस्व रक्त क़रार दिया जायेगा न माहवारी का खून बल्कि ये बीमारी का खून होगा।

निफ़ास (प्रसव रक्त): निफ़ास उस खून को कहते हैं जो पैदाइश के बाद औरत के गर्भ से निकलता है। इसका कम से कम समय निश्चित नहीं है। एक लम्हा भी खून आ

जाये तो वो निफ़ास का माना जायेगा, और जैसे ही बन्द हो जायेगा औरत पाक मानी जायेगी जबकि इसका अधिक से अधिक समय चालिस दिन निश्चित है। इसलिये तिरमिज़ी में हज़रत उम्मे सलमा रज़ि0 से रिवायत है कि नबी करीम स0अ0 के ज़माने में निफ़ास वाली औरतें चालिस दिन बैठती थीं।

अगर किसी औरत को चालिस दिन से ज़्यादा खून आ जाये तो बीमारी का खून माना जायेगा। अगर बच्चा अपंग पैदा हो या गर्भ कुछ दिन पहले गिर जाये तो अगर कुछ अंग बन गये हो तो निफ़ास का हुक्म जारी होगा। अगर केवल गोश्त का लोथड़ा हो जिसमें कोई रूप न हो तो उसके बाद आने वाले खून को निफ़ास नहीं माना जायेगा, बल्कि उसे बीमारी या माहवारी घोषित कर दिया जायेगा।

अगर जुड़वा बच्चे पैदा हों तो निफ़ास का हुक्म पहले बच्चे की पैदाइश से ही जारी हो जायेगा, लेकिन जुड़वा बच्चे तब ही माने जायेगें जब उनके बीच छः महीने से कम का समय हो।

निफ़ास के हुक्मः निफ़ास का खून बन्द होने के बाद भी नहाना वाजिब है, और इसमे भी वो सारे हुक्म जारी होते हैं जो पीछे माहवारी में बयान किये गये हैं।

इस्तेहाज़ा (बीमारी): माहवारी के कम से कम समय तीन दिन से कम या दस दिन से अधिक या निफ़ास के चालिस दिन से अधिक आने वाले खून को इस्तहाज़ा कहते हैं। इस खून से माहवारी और निफ़ास के आदेश नहीं लागू होते हैं। पाक औरतों की तरह वो नमाज़ रोज़ा करती रहेंगी। हज़रत फ़ातिमा बिन्ते हुबैश आंहज़रत स0अ0 के पास आयीं और कहाः ऐ अल्लाह के रसूल स0अ0! मैं इस्तहाज़ा की हालत में हूं, पाक नहीं रहती हूं, तो क्या नमाज़ छोड़ दूं? आप स0अ0 ने फ़रमायाः "नहीं, वो रग का खून है, माहवारी नही है।"

इस्तेहाज़ा की हालत में होने का हुक्म ये है कि वो हर नमाज़ का वक़्त शुरू होने के बाद वज़ू कर ले, फिर दूसरे वक़्त के लिये दोबारा वज़ू करे। तिरमिज़ी की रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमायाः ''इस्तेहाज़ा की हालत वाली औरतें माहवारी के दिनों में नमाज़ छोड़ देंगी, फिर गुस्ल कर लेंगी और हर नमाज़ के लिये वज़ू कर लेंगी, और रोज़ा नमाज़ करेंगी।

मालूम हुआ कि इस्तेहाज़ा की हालत में औरत पाक औरतों की तरह सभी कामों को अन्जाम दे सकती है और पति उससे संबंध भी बना सकता है।

शेष : हमारा अतीत और वर्तमान

ये इस क़ौम की सुनहरी दास्तां है जो ईमान लाने के बाद ख़ुदा ही से मांगती रही। आज हम देखते हैं कि वही क़ौम जिसने इस्लाम की सदाक़त व हक़्क़ानियत का अनुभव किया है। उसकी सच्चाई से अच्छी तरह परिचित है, ख़ुद उसके दुश्मनों ने उन विशेषताओं की गवाही दी है जिनके सामने अक़्ल हैरान रह जाती है। इतिहास गवाह है समुद्र की सीमा से मिलने वाले ज़मीन के हर क्षेत्र गवाह है कि जब तक ये उम्मत अपने दीन पर क़ायम रही, पूरी ज़मीन की बेहतरीन उम्मत थी, जो इन्सानों की हिदायत के लिये वजूद में लायी गयी थी। इस उम्मत का हर व्यक्ति फ़रिश्ता सिफ़त इन्सान था। वो ये सब कुछ इसलिये थे कि उन्होंने अपने रब को पहचाना, हर छोटी–बड़ी चीज़ में उसके दीन पर अमल किया, उन्होंने किताब व सुन्नत से हटने को बदतरीन गुनाह समझा और दिल में ये यक़ीन जमा लिया कि अल्लाह के हुक्मों को छोड़ना ही मुसीबतों का कारण है। और जो ख़ुदा व रसूल को छोड़ता है ख़ुदा व रसूल से उसका कोई वास्ता नहीं रहता, इस बात को क़ुबूल करने के बाद कोई कामयाब व बाइज़्ज़त हो ये नामुमकिन है।

"अगर ख़ुदा तुम्हारा मददगार है, तो तुम पर कोई हावी नहीं हो सकता, और अगर वो तुम्हें छोड़ दे तो फिर कौन है कि तुम्हारी मदद करे" (सूरह आले इमरानः 16)

एक दूसरी जगह फ़रमायाः

"जो लोग ख़ुदा और उसके रसूल स0अ0 का विरोध करते हैं वो बहुत ही ज़लील होंगे।" (सूरह मुजादिलाः 20)

ख़ुदा के दीन से दूरी और उसकी शिक्षाओं को छोड़ने के कारण से आज हम लोग ज़लील किये गये लोगों ही में से हो गये हैं।

दूसरी बात ये कि जब लोगों ने उन मूल्यों से लापरवाही बरती और ख़ुदा की शिक्षाओं पर अमल करने में सुस्ती व काहिली दिखाई तो पतन का शिकार हुए। हमारी हालत बद से बदतर होती चली गयी। यहां तक कि ज़िल्लत व कमज़ोरी, बिखराव हमारी पहचान बन गयी है।

वर्तमान या अतीत में हमारे जो अनुभव हुए हैं, उन्होंने दो बातें साबित कर दी हैं उनमें किसी शक व शुब्हे की गुन्जाइश नहीं। पहली बात तो ये है कि हमारे पूर्वजों ने जब दीन की रस्सी को मज़बूती से थामा तो एक ज़बरदस्त सभ्यता अस्तित्व में आयी और एक बेमिसाल संस्कृति प्रस्तुत की गयी और आज तक दुनिया उन्हीं नेमतों से लाभान्वित हो रही है।

मीडिया को पक्षपाती नहीं होना चाहिये

मौलाना असरारुल हक़ क़ासमी

इस नये दौर में जिस चीज़ ने हैरतअन्गेज़ तरक़्क़ी हासिल की है उसमें मीडिया भी है। चाहे प्रिन्ट मीडिया हो या इलेक्ट्रानिक मीडिया दोनो की प्रसिद्धि बढ़ती जा रही है। आये दिन नये अख़बार व पत्रिकांए अस्तित्व में आ रही हैं और बहुत से पुराने अख़बार व पत्रिकांए नयी अपेक्षाओं के साथ सामने आ रही हैं। किताब इत्यादि का प्रकाशन भी बड़े पैमाने पर हो रहा है। इलेक्ट्रानिक मीडिया ने तो और ज़्यादा बड़े पैमाने पर अपने पांव फैलाये हैं। रेडियो चैलनों, टीवी चैनलों और इन्टरनेट पर मौजूद वेबसाइटों पर सरसरी निगाह डाली जाये तो ऐसा महसूस होता है कि इस क्षेत्र में जिस बिजली की रफ़्तार के साथ उन्नति हुई है, वो अचम्भित करने वाली है। मीडिया के क्षेत्र में होने वाली उन्नतियों के परिणाम में सामाजिक स्तर पर बहुत से बदलाव भी हुए हैं जिनके सकारात्मक परिणाम सामने आ रहे हैं। लेकिन चिंता का विषय वो है जो नकारात्मक परिणामों से संबंधित है। मीडिया के वो चैनल जिनका संबंध मनोरंजन से है, वो समाज में ज़्यादा बिगाड़ का कारण बन रहे हैं और नयी नस्ल को समय की बर्बादी व दूसरी बुराइयों की ओर धकेल रहे हैं। वास्तव में वो लोग जो इस प्रकार के अख़बार व पत्रिकांए निकाल रहे हैं या टीवी चैनल चला रहे हैं उनका मक़सद दौलत कमाना है चाहे वो नयी नस्ल को अश्लीलता का ज़हर पिलाकर ही क्यों न प्राप्त हो? इस मक़सद में उन्हें कामयाबी मिल रही है और उनकी तिजोरियां दौलत से भरती चली जा रही हैं। इससे भी ज़्यादा दुखद बात ये है कि न्यूज़ चैनल और अख़बार व पत्रिकांए भी पत्रकारिता के नियमों को ताक़ पर रखती दिखाई दे रही हैं। सच्चाई मीडिया के लिये अतिआवश्यक है। सच्चाई के बग़ैर मीडिया की कोई हैसियत बाक़ी नहीं रह जाती है। इसी तरह से समानता भी मीडिया के लिये अतयन्त आवश्यक है बल्कि समानता के अभाव मीडिया के लिये विचारों से परे बात है लेकिन आज मीडिया में सच्चाई और समानता दोनों को नज़रअन्दाज़ करने की कोशिश की जा रही है। अख़बार में छपने वाली बहुत सी ख़बरें इस हिसाब से तराशी हुई होती हैं कि उनमें हक़ीक़त का पहलू धुंधला होता है। कुछ संस्थांए अपने अनुसार ख़बरों को ढालती और बनाती हैं। ऐसे मामलों में पश्चिमी देश ज़्यादा आगे हैं।

हमारी राष्ट्रीय मीडिया में भी समानता पर इतना ध्यान नहीं दिया जा रहा है जितना कि दिया जाना चाहिये। जैसे अख़बार व पत्रिकाओं और टीवी चैनल पिछले कई सालों से ऐसी ख़बरों को खूब मिर्च मसाला लगाकर पेश कर रहे है जिनमें मुस्लिम नौजवानों पर आतंकवाद का आरोप होता है। जब–जब पुलिस बल या जांच एजेंसियां किसी मुसलमान को आतंकवाद के आरोप में गिरफ़्तार करके लाती हैं तो अख़बारों व टीवी चैनलों पर उनकी खूब ख़बरे दिखाई जाती हैं। मोटी–मोटी सुर्ख़ियां लगायी जाती हैं और बहसे छेड़ दी जाती हैं। यानि अख़बार और चैनल इस मौक़े पर कुछ इस तरह कवरेज करते हैं जैसे कि पूरा मुस्लिम वर्ग दहशतगर्दी की राह पर चल रहा हो। मीडिया के प्रोपगन्डे के कारण हिन्दुस्तान भर में मुसलमानों की छवि बहुत हद तक ख़राब हो चुकी है और बहुत से लोग उन्हें दहशतगर्दी के आइने में देखने लगते हैं। ऐसा लगता है कि मीडिया मुसलमानों को बदनाम करना चाहता है ताकि मुसलमानों के लिये ज़िन्दगी तंग हो जाये। इस पर मीडिया की दोगुली पालिसी की एक बड़ी दलील ये है कि जब उन मुस्लिम नौजवानों को जिन पर आतंकवाद का आरोप होता है, रिहा किया जाता है तो वो ख़ामोशी अपना लेते हैं जैसे कि उन्हें सांप सूंघ गया हो। अदालतें अब तक दर्जनों मुस्लिम नौजवानों को रिहा कर चुकी हैं और कह चुकी हैं कि वो बेक़ुसूर हैं। उन पर

आतंकवाद का आरोप सिद्ध नहीं होता। न्याय और समानता की मांग तो ये है कि मीडिया को उसी जोश के साथ उनकी रिहाई की ख़बर को पेश करती जितने जोश के साथ वो उनकी गिरफ़्तारी की ख़बरें पेश करती है। हालांकि इस तरह की ख़बरों को खुले दिल के साथ सामने लाना, पुलिस की ज़्यादती की पोल खोलना कहीं ज़्यादा दिलचस्प बात है। ये भी देखा जा रहा है कि जब दहशतगर्दी के इल्ज़ाम में कट्टरवादी हिन्दु गिरोहों के लोग गिरफ़्तार किये जाते हैं, उन पर मुक़दमे चलते हैं, उनके द्वारा संगीन जुर्मों को कुबूला जाता है तो अंग्रेज़ी और हिन्दी के अख़बार मानो ख़ामोशी अपना लेते हैं। इसी प्रकार उनकी ख़ामोशी का प्रदर्शन टीवी चैनलों पर भी दिखाई देता है। मीडिया का इस प्रकार के व्यवहार, पक्षपात और झूठ के कारण मीडिया के किरदार पर बहुत से सवाल खड़े होते हैं?

"मीडिया" को पूरी आज़ादी हासिल होनी चाहिये या नहीं? ये सवाल दिलचस्प भी है और बहुत ही महत्वपूर्ण भी। जहां मीडिया को आज़ादी हासिल नहीं है और उस पर तरह तरह की पाबन्दियां लगी हुई हैं वहां इसके कड़वे अनुभव हो रहे हैं। लेकिन दूसरी ओर जहां मीडिया को लगभग पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त है वहां भी अलग–अलग प्रकार के बहुत से कड़वे अनुभव सामने आ रहे हैं और मीडिया की आज़ादी क़ौमी व सामाजिक स्तर पर एक समस्या बनती जा रही है। लोकतान्त्रिक देशों में मीडिया की आज़ादी को सबसे अहम माना जाता है और ये सच भी है कि अमली तौर पर लोकतन्त्र उसी समय स्थायी रह सकता है जब मीडिया को आज़ादी हासिल हो और अभिव्यक्ति के विचारों पर पाबन्दी न हो। क्योंकि विपरीत स्थिति में मीडिया के सरकारी यन्त्र बन जाने की संभावना अधिक है। जैसा कि इसका अनुभव चैनलों, रेडियो और अख़बारों को देखकर लगाया जा सकता है जो सरकार के अधीन हैं। मगर वो टीवी, रेडियो चैनल और अख़बार व मैग्ज़ीन जो निजी है अलग तस्वीर पेश करते दिखाई देते हैं। ये निजी चैनल व अख़बार ज़्यादातर अहम मसलों पर सरकार के ध्यान न देने पर उन्हें आड़े हाथों लेते हुए दिखाई देते हैं। इसीलिये कभी–कभी सरकारी संस्थाएं मीडिया से ख़फ़ा दिखाई देती हैं। जबकि जिन देशों में मीडिया को आज़ादी हासिल नहीं है वहां शासक वर्ग मीडिया से ज़रा भी ख़फ़ा नहीं होता क्योंकि वहां के अख़बार, रेडियो और टीवी चैनलों पर वही प्रसारित होता है जो वहां की सरकारें चाहती हैं। ज़ाहिर सी बात है कि ऐसी स्थिति में सरकारों का सही चेहरा तो सामने नहीं आता है लेकिन उनकी कोताहियों व लापरवाहियों पर पर्दा पड़ा रहता है। मानों की उन देशों में मीडिया जनता की आवाज़ नहीं होता बल्कि सिर्फ़ सरकारी तन्त्र होता है। लेकिन अगर स्वतन्त्र मीडिया भी पक्षपात करने लगे तो फिर मीडिया का क्या महत्व व फ़ायदा बाक़ी रह जायेगा? मीडिया के ग़ैर ज़िम्मेदाराना रवैये को देखते हुए अब धीरे–धीरे ये आवाज़ उठती हुई नज़र आ रही है कि ख़बरों के चैनलों को इतना बेलगाम न छोड़ा जाये कि उनके कारण क़ौम प्रभावित हो और किसी वर्ग विशेष को उससे नुक़सान पहुंचे।

इस सच्चाई से इनकार नहीं किया जा सकता की जब तक मीडिया सुधार पसन्द और अपक्षपाती नहीं होगा उस समय तक उसके फ़ायदे सामने नहीं आ सकेंगे। आज दर्द यही है कि सारी दुनिया में मीडिया का सकारात्मक रोल समाप्त होता जा रहा है जिसके कारण मीडिया में पक्षपात साफ़ नज़र आ रहा है। जिन कौमों को मीडिया पर वर्चस्व प्राप्त है वो इसे अपने फ़ायदे के लिये इस्तेमाल कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया चूंकि यहूदियों से प्रभावित है इसलिये वो इसका ग़लत इस्तेमाल इस्लाम और मुसलमान के ख़िलाफ़ कर रहे हैं। इसके लिये पूरी दुनिया को ग़ौर करना चाहिये ताकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मीडिया से निर्माणी काम लिया जा सके। मीडिया को संतुलित करने के लिये मीडिया के मैदान के सभी वर्गों को समान महत्व दिया जाना चाहिये। ख़ास तौर पर मुसलमानों को इस मैदान में आगे आना चाहिये, क्योंकि अपनी आबादी के हिसाब से वो जहां बहुत से हिस्सों में पीछे हैं, उससे ज़्यादा मीडिया के मैदान में पीछे हैं। जब तक मीडिया पर किसी एक क़ौम या वर्ग का वर्चस्व रहेगा उस समय तक मीडिया के ज़रिये नाजायज़ मक़सद की प्राप्ति को रोका जाना मुश्किल होगा।

शैतान से बचने के कुछ उपाय

मुहम्मद अलाउद्दीन नदवी

हम अपनी आम बोलचाल की भाषा में शैतान, शैतानी हरकत, शैतानी काम, शैतानी सोच, मुकम्मल शैतान, शैतान सवार होना और शैतान से ज़्यादा मशहूर होना इत्यादि शब्द प्रयोग करते हैं और इनमें सरकश, नाफ़रमान, मरदूद, बदज़ात, झगड़ालू और फ़सादी ज़हन का इन्सान मुराद लेते हैं। खुद कुरआन ने "और जब अलगाव में अपने शैतानों से मिलते हो" (सूरह बक़राः 14) कह कर उन इन्सानों को मुराद लिया है जो इस्लाम के विरोध में आगे–आगे थे।

शैतान के मिशन, मक़सद, उसके तौर–तरीक़े और उसकी ख़बासत से भरी हरकतों का जाएज़ा लें तो हमें उसकी तस्वीर कुछ यूं नज़र आती हैः

शैतान इन्सान का खुला दुश्मन है। उसी ने आदम को जन्नत से निकलवाया है। शैतान बुराई, बेहयाई और हर शर और फ़साद की दावत देने वाला है। शैतान जादू, टोना और टोटका और सिफली अमल का ध्वजवाहक है। शैतान हर ख़ैर के काम से रोकने वाला और अल्लाह की कुरबत से दूर रखने वाला है। शैतान बुज़दिली, कम हिम्मती और घबराहट फैलाता है और फ़ाक़े और ग़रीबी के ख़ौफ़ में डालकर इन्सान को ज़िल्लत और पस्ती के गड्ढ़े में धकेल देना चाहता है। वो सच्चाई से दूर करता है और बातिल से क़रीब करता है। वो इन्सान को हरियाली दिखाता है। उसे बहकाता है और वरग़लाता है। शराब, जुए, लड़ाई–झगड़े और हसद व नफ़रत और दुश्मनी को बढ़ावा देता है। शैतान मुसलमानों में बुग़्ज़ व नफ़रत का बीज बोता है। गुमराही को खुशनुमा बनाकर पेश करता है। वो शक व शुब्हों को हवा देता है। वो वसवसे पैदा करता है। वो इन्सान को झूठी आरज़ूंए में लगाता है और गुनाहों को लज़ीज़ बनाकर उनके जाल में फ़ांसता है। शैतान इन्सान को बेशर्म, बे हया और बेग़ैरत बनाता है। वो दुनिया परस्ती, सोना परस्ती और हवस परस्ती में डालता है। वो आदमी को आदमी से लड़ाता है और मुजरिमों व दहशतगर्दों की सरपरस्ती करता है। वो फ़िज़ूल ख़र्ची करने वालों को अपना भाई समझता है, वो खुदा की नाफ़रमानी का हुक्म देता है। वो नबियों के कामों में रोड़े डालता है और उनकी पैरवी करने वालों को हक़ से हटाकर जहन्नम की ओर ले चलता है। ये शैतान इन्सान का खुला हुआ दुश्मन है। इसकी मक्कारियां, चालबाज़ियां और हथकन्डे हद से ज़्यादा हैं। ये शैतान अपने मिशन में शुरू से लगा हुआ है और दुनिया में इसके चाहने वाले हर दौर में भारी मात्रा में पाये जाते रहे हैं।

अगर कोई नादान बच्चा सवाल करे कि शैतान कैसा होता है? उसकी हरकतें कैसी होती है? और वो दुनिया में किस तरह फ़साद फ़ैलाता है? यूं तो उसके सामने अमरीका का नाम ले लिया जाये तो उसे शैतान की हक़ीक़त समझने में यक़ीनन ही मदद मिलेगी। अल्लामा खुमैनी ने बहुत सच कहा था जिस वक़्त के अमरीका को "शैतान बुज़ुर्ग" की संज्ञा दी थी। इसमें दो राय नहीं हो सकती कि अमरीका ने अल्लाह के सच्चे दीन इस्लाम और उसके मानने वालों के ख़िलाफ़ जंग छेड़ रखी है। ये जंग सलीबी जंगों का शेष है जो नये अन्दाज़ से लड़ी जा रही है। उसके तौर तरीक़े बदले हुए हैं मगर मिज़ाज में वही शैतनत है। इस हालिया जंग में रसूलुल्लाह स0अ0 का अपमान और कुरआन करीम के अपमान के तुच्छ उद्देश्य की पूर्ति के लिये दिल को तकलीफ़ देने वाली फ़िल्मों और शर्मनाक कार्टूनों का सहारा लेकर मुसलमानों के जज़्बात को आग दिखाई जा रही है ताकि उन्हें ख़त्म कर देने का मन्सूबा पूरा हो।

इस समय के इब्लीसी लीडर ज़रा सा शीरा लगाकर फ़ितना–फ़साद की आग को भड़काते हैं और मुसलमानों को ग़म व गुस्सा में बिलबिलाते, तड़पते और मरते देखकर खुशियां मनाते हैं। ये बेहूदा फ़िल्में और ये शर्मनाक कार्टून्स संयोग मात्र नहीं हैं। ये दुश्मन की साज़िश का हिस्सा हैं। इन शैतानी साज़िशों के ख़िलाफ़ मुसलमानों का ग़म व गुस्से की आग में भड़कना, बेचैनी के शोलों में जलना और गुस्से के तूफ़ानों से गुज़रना स्वाभाविक है। विरोध होना चाहिये, गुस्सा ज़ाहिर करना चाहिये, दुश्मन की गन्दी ज़हनियत का परदा फ़ाश करना चाहिये, मगर इन ख़बासतों का मुंहतोड़ जवाब देने का ये सही तरीक़ा नहीं है

और न ही इससे दुश्मन का बाल बाका होने वाला है।

इस्मते अम्बिया नबूवत को लागू करने वाली चीज़ है। हुज़ूर सरवर–ए–दो जहां स0अ0 के लिये "ख़ुदा की क़सम लोगों में तुम्हारी इस्मत है" का ख़ुदाई वादा कल भी था और आज भी है। ख़बीसों की ख़बासतें और ज़ालिमों के जुल्म से हिफ़ाज़त करने वाला तो ख़ुद अल्लाह है। हम आप स0अ0 की ज़ात की विशेषताओं के हवाले से विरोध करते हैं तो आप की शान में कोई बढ़ोत्तरी नहीं करते बल्कि अपनी मुहब्बत का सुबूत देते हैं। समय की मांग ये है कि हम लोहे को लोहे से काटने की कोशिश करें। इस सिलसिले में यहां कुछ हदीसें ज़िक्र की जाती हैं।

अगर यूट्यूब पर इनोसेंस आफ़ मुस्लिम नामक बेहूदा और अपमानित फ़िल्म के कुछ सीन डाले गये और दुनिया के सबसे पवित्र व्यक्ति के चरित्र पर कीचड़ उछालने का प्रयास किया गया तो हम हुज़ूर स0अ0 के श्रेष्ठ व्यवहार के हज़ारों सीन (जिनमें लाज़मी तौर पर आप स0अ0 का अक़्स–ए–जमील न दिखाया गया हो) क्यों नहीं डाल देते? हम आपकी जीवनी से दूसरों को परिचित कराने के लिये आगे क्यों नहीं आते? क्या मैं केवल विरोध करने वालों से नहीं बल्कि चिन्तकों, दीनी व दावती काम करने वालों और मदरसों और दीनी आन्दोलनों के ज़िम्मेदारों से सवाल कर सकता हूं कि ग़ैर मुस्लिमों के सामने पाक चरित्र के परिचय के लिये आपने अब तक क्या इरादा बनाया है? और इसके अनुसार कितना काम आगे बढ़ा है? अगर हम शैतानों को लगाम नहीं दे सकते तो सकारात्मक लिट्रेचर तो उपलब्ध करा सकते हैं और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये बेशुमार वेबसाइट का प्रयोग कर सकते हैं।

इस गन्दी और शर्मनाक फ़िल्म का प्रोडयूसर (Producer) मिस्र का नागरिक है। इस समय मिस्र के ग़ैरतमन्द शासन ने अमरीका से इस व्यक्ति की मांग की मगर अमरीका ने हवाले करने से इनकार कर दिया। दूसरे देशों के शासकों की बेग़ैरती का तो ये हाल है कि जब कभी अमरीका ने उन देशों से किसी व्यक्ति की मांग की तो तुरन्त उसके हवाले कर दिया गया। विरोध करने वालों को चाहिये कि मिस्री प्रोडयूसर को मिस्र के हवाले करने की मांग की आवाज़ को बुलन्द करें और डायरेक्टर नाकोला बास्ली को गिरफ़्तार करने और उस पर मुक़दमा चलाने की मांग दोहराते रहें।

इस्लाम के दुश्मन तत्व की हमेशा से ये साज़िश रही है कि वो मुसलमानों के लिये नित नये मसले खड़े करते रहें ताकि वो विरोधों व प्रदर्शनों में उलझकर अपनी क्षमता नष्ट करते रहें। लिहाज़ा गुस्से का इज़हार तो अवश्य करें किन्तु आलमी बिरादरी को मजबूर करें कि वो ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून का निर्माण करे कि आगे किसी को किसी के दीन व धर्म और पवित्र हस्तियों को तकलीफ़ पहुंचाने की जुर्रत न हो और अगर कोई सरफिरा जुर्रत दिखाये तो क़ानूनी पकड़ की जा सके। अगर दुनिया में विभिन्न धर्मों के मध्य सद्भाव पैदा करने की ज़रा सी भी आवश्यकता महसूस की जाती है तो फिर धार्मिक भाव से खिलवाड़ करने वालों का मुंह बन्द करना ही होगा।

दुश्मन को तकलीफ़ पहुंचाने का आसान तरीक़ा ये है कि रक्षात्मक पोज़ीशन न अपनायी जाये हमलावर भीड़ की पालिसी अपनायी जाये। अमरीका व यूरोप के अराजक तत्व "विचारों की स्वतन्त्रता" का वास्ता देंगे। क्या ये "विचारों की स्वतन्त्रता" केवल मुसलमानों को तकलीफ़ पहुंचाने ही के लिये है? उनके हक़ में कोई "विचारों की स्वतन्त्रता" का प्रयोग करे तो ये आग बबूला हो जाते हैं। विरोध करने वालों को चाहिये कि उनके इस दोगुले रवैये और फ़रेबी नारों की पोल खोलें और उनकी कमज़ोरियों को खुलेआम ज़ाहिर करें कि ये अपने पसंदीदा और ना पसंदीदा दोनों ही तरह के व्यक्तियों को "विचारों की स्वतन्त्रता" के हवाले से विषय बनाना क्यों गवारा नहीं करते??!

अमरीका वो शैतानों का बुज़ुर्ग और वो चिकना घड़ा है जिस पर मुसलमानों के विरोध का कोई असर होने वाला नहीं। आवश्यकता इस बात की है कि उसके प्रोडक्ट्स (products) का बायकाट किया जाये। बायकाट करने का फ़ैसला वक़्ती और जज़्बाती न होकर एक कारगर और सोची समझी पालिसी का नतीजा हो। "लोगों जो ईमान लाये हो यहूदियों और इसाईयों को अपना दोस्त मत बनाओ, ये आपस ही में एक–दूसरे के दोस्त हैं, और अगर तुममे से कोई उनको अपना दोस्त बनाता है तो उनकी भी गिनती उन्हीं मे से है, यक़ीनन अल्लाह ज़ालिमों की रहनुमाई नहीं करता।" (सूरह माइदाः 51) अगर हम मिल्ली ग़ैरत का सुबूत देते हुए और मुहब्बत–ए–रसूल के तक़ाज़ों को अन्जाम देते हुए ये तय करें कि अमरीका की चीज़े नहीं ख़रीदेंगे जब तक कि वो संजीदगी से माफ़ी न मांग ले और आगे के लिये ऐसी हरकत न करने का वादा करे, और फ़िलहाल जब तक मुजरिमों को सज़ा न दे दे। अगर हमने इतना कर लिया तो इन्शाअल्लाह अमरीका घुटने टेकने पर मजबूर होकर रहेगा।

शेख़ अदनान काकाख़ैल

अनोखा मुक़द्दमा

सऊदी अरब के शहर "क़सीम" की शरई अदालत एक अनोखे मुक़द्दमे का साहसी फ़ैसला करने जा रही थी। अदालत का कमरा दोनों पक्षों के अतिरिक्त पत्रकारों, मीडिया के नुमाइन्दों और इस अजीब व ग़रीब मुक़द्दमे में दिलचस्पी लेने वालों से भरा था। जैसे ही अदालत ने मुद्दआ अलैह (जिस पर दावा किया गया हो) के ख़िलाफ़ फ़ैसला सुनाया तो अदालत मुद्दआ अलैह की दर्दनाक चीख़ों से गूंज उठी। मुक़द्दमे ने दूसरे लोगों के दिलों के तार छेड़ दिये थे। अदालतों में बहुत कम ऐसे मौक़े आते हैं जब मीडिया वालों के आंखों में भी आंसू आ जाये और तो और क़ाज़ी साहब भी फ़ैसला सुनाते वक़्त जज़्बात पर क़ाबू न रख सके। इस वाक़्ये को सऊदी अख़बारों और सऊदी वेबसाइट पर बहुत अहमियत मिली और उलमा–ए–किराम ने जुमा के ख़ुत्बों में इसकी चर्चा की।

ये वाक़्या "हैज़ानुल फ़हीदिल हरबी" से संबंधित है जो "बुरैदा" से 90 किलोमीटर फ़ासले पर स्थित एक गांव "अस्याह" का रहने वाला है। हैज़ान अपनी मां का बड़ा बेटा है और बड़ी तंगी के साथ जीवन व्यतीत करता है। हैज़ान को अपने गांव, थोड़ी सी बंजर ज़मीन, बकरियों और ऊंटो से इस क़दर लगाव है कि किसी क़ीमत पर उनको छोड़कर शहर में जा बसने को सोच नहीं सकता था। हैज़ान अब सफ़ेद बालों वाला बूढ़ा है और उसकी मां नब्बे सालों से ऊपर की हो चुकी है। हैज़ान की कुल कायनात उसकी मां है, जिसकी वो रात दिन सेवा करता था। इस बुढ़िया को भी अपने बेटे से बेतहाशा मुहब्बत थी और वो सुबह व शाम उसके लिये दुआंए करते–करते न थकती थी। हैज़ान की सबसे बड़ी व्यस्तता भी उसकी मां थी और उसकी ख़िदमत करके वो दुनिया में बेतहाशा सुकून और आख़िरत में न ख़त्म होने वाले सवाब का उम्मीदवार था।

सब कुछ ठीक–ठाक चल रहा था कि अचानक हैज़ान की सुकून से भरी हुई ज़िन्दगी में एक भूचाल आ गया जिसने उसको चकरा कर रख दिया। हुआ ये कि उसका छोटा भाई जो काफ़ी अर्से से शहर में रह रहा था और बहुत खुशहाल था, उसने अचानक मांग कर दी कि इतना ज़माना हैज़ान ने मां की ख़िदमत की है और उसे अपने पास रखा। अब वो अपने हक़ की मांग करता है। आख़िरकार वो उसकी भी मां है और उसकी ख़िदमत करना उसका भी हक़ है। अब वो मां को अपने साथ शहर ले जायेगा, और अब जितने समय तक मां हैज़ान के साथ रही है उतने ही समय तक मेरे साथ भी रहेगी। हैज़ान को अपनी दुनिया अंधेरी होती और सबसे अज़ीज़ चीज़ लुटती हुई महसूस हुई। उसने भाई को बहुत समझाया कि मैं मां के बग़ैर नहीं रह सकूंगा। मेरे बुढ़ापे पर रहम करो, मगर छोटा भाई टस से मस न हुआ। गांव के बड़ों और पंचायत ने सुलह–सफ़ाई की कोशिश की मगर सफलता नही मिली। आख़िरकार मुक़द्दमा शरई अदालत में ले जाया गया। जहां क़ाज़ी साहब ने भी दोनों के बीच सुलह कराने की कोशिश की, मगर कोई सूरत न बन सकी। मुक़द्दमे के लम्बा होने और पक्षों के अड़ियल रवैये से तंग आकर क़ाज़ी साहब ने कहाः "अगली पेशी पर बूढ़ी मां को पेश किया जाये, ताकि अदालत खुद उससे पूछ सके कि वो किसके साथ रहना पसन्द करती है।" अगली पेशी पर दोनों बेटे मां को लेकर आये, तो लोगों ने अजीब मंज़र देखा। एकदम सफ़ेद नब्बे साल की बुढ़िया हड्डियों का एक ढ़ांचा थी, जिसका वज़न मुश्किल से बीस किलो होगा। बच्चों ने उसको डब्बे में डालकर हाथों में उठाया हुआ था।

क़ाज़ी साहब ने बुढ़िया से पूछाः "क्या वो जानती है कि उसके दोनों बेटों के बीच उसकी ख़िदमत और देखभाल के लिये मुक़दमा चल रहा है?" बुढ़िया ने जवाब दियाः "वो इस मुक़द्दमे को जानती है" क़ाज़ी साहब ने पूछाः "वो बताये कि वो किसके पास जाकर रहने को पसन्द करेगी?"

(शेष पेज 15 पर)

इस्लाम में सुन्नत की अहमियत

सैय्यद मुहम्मद शाहिद सहारनपुरी

इस्लामी क़ानून को फैलाने और उसको अज़मत व पुख़्तगी बख़्शने में सुन्नत को सबसे ज़्यादा दख़ल है और इसी वजह से चारों फ़िक़्ही इमामों के यहां सुन्नत की अहमियत और उसकी भरपूर पैरवी करने पर पूरा–पूरा ज़ोर दिया गया है, और चूंकि सुन्नत के बग़ैर शरीअत का कोई अमल पूरा और मुकम्मल नहीं किया जा सकता, इसलिये दीन के दुश्मनों और इस्लाम दुश्मनों ने हमेशा मुसलमानों के दिलों से सुन्नत की अज़मत और अहमियत को ख़त्म करने के लिये बड़ी–बड़ी कोशिशें कीं, लेकिन दीन व शरीअत और क़ुरआन व सुन्नत चूंकि आपस में एक दूसरे के लिये आवश्यक हैं इसलिये अल्लाह तआला ने हमेशा और हर ज़माने में सुन्नत की हिफ़ाज़त का भी ग़ैबी इन्तिज़ाम फ़रमाया है।

सुन्नत का अर्थ तरीक़ा और रविश है और दीने इस्लाम में नबी–ए–करीम स0अ0 की सुन्नत से मुराद आप के जीवन का चरित्र और आप का तरीक़ा है, जब ख़ास तौर से सुन्नत शब्द बोला जाये तो इसमें हुज़ूरे अकरम स0अ0 के तमाम आदेश और मनाही और आप की बात व काम दाख़िल होंगे इसलिये हदीस व सुन्नत को कोई अहमियत न देना अपनी नासमझी और शैतान की पैरवी करना है।

यहां संक्षेप में सुन्नत की अहमियत को बयान किया जाता है इसलिये कि रसूलुल्लाह स0अ0 की हक़ीक़ी और सच्ची इताअत यही है कि आप की सुन्नतों पर अमल किया जाये और इतना ही नहीं बल्कि इताअत और आप की सुन्नतों पर अमल किये हुए बग़ैर इस्लाम के अरकान अदा करना नामुमकिन है और यही कारण है कि अख़लाक़ और चरित्र में भी रसूले अकरम स0अ0 की पैरवी और इत्तिबा फ़र्ज़ है।

सुन्नत पर अमल किये बग़ैर दीन और शरीअत पर अमल करना नामुमकिन है, क्योंकि जिस तरीक़े से अल्लाह के हर हुक्म को मानना ईमान बिल्लाह के लिये ज़रूरी है ऐसे ही ईमान बिर्रसूल के लिये आपके हर हुक्म व हर बात व हर अमल को दलील मानना भी ज़रूरी है और आप के किसी हुक्म को या किसी सुन्नत को छोड़कर किसी और की पैरवी करना ठीक नहीं।

अल्लाह तआला ने जिस तरह अपने ऊपर ईमान लाने का हुक्म दिया उसी तरह अपने रसूल स0अ0 पर भी ईमान लाने को ज़रूरी क़रार कर दिया। इसी तरह नबी–ए–करीम स0अ0 की बात मानना भी लाज़िमी और ज़रूरी है।

आख़िरी हज के मौक़े पर आप स0अ0 ने साफ़ ऐलान फ़रमाया था कि! "ऐ लोगों! मैं तुम्हारे बीच दो ऐसी चीज़ें छोड़कर जा रहा हूं कि अगर तुम इनपर अमल करते रहोगे तो कभी गुमराह न होगे और वो दी चीज़ें ये हैं: एक अल्लाह तआला की किताब क़ुरआन शरीफ़ और दूसरे मेरी सुन्नत।"

जिन लोगों ने हर मामले में क़ुरआन शरीफ़ और सुन्नते रसूलुल्लाह स0अ0 को अपना रहबर व इमाम बनाया वो हमेशा सीधे रास्ते पर चले और जो क़ुरआन व सुन्नत को छोड़ने वाले हैं वो दुनिया में भी गुमराह हुए और आख़िरत में भी सज़ा पायेंगे।

इमामे अवज़ाई हज़रत हस्सान बिन अत्तिया से नक़ल करते हैं कि हज़रत ज़िब्राईल अलै0 नबी करीम स0अ0 के पास हदीस लेकर इसी तरह आते थे जिस तरह क़ुरआने करीम लेकर आते थे

नबी करीम स0अ0 ने क़ुरआन पाक के मुजमल अहकाम को अपने क़ौल व अमल यानि सुन्नत की उसी प्रकार व्याख्या फ़रमायी है जिस तरह अल्लाह तआला ने आपके दिल में डाला और इसकी मिसाल में ये कहा जा सकता है कि क़ुरआन शरीफ़ में सिर्फ़ ये हुक्म है कि नमाज़ क़ायम करो, अब ये नमाज़ क़ायम करने का तरीक़ा क्या है और नमाज़ किसे कहते हैं अगर इसको हुज़ूर स0अ0 अपनी बात और अमल से न समझाते तो किसी भी व्यक्ति को नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा न मालूम होता।

अल्लाह तआला ने नबी करीम स0अ0 के पास दो प्रकार की वही भेजी और उन दोनों की इताअत को अल्लाह ने लाज़िम कर दिया। उनमें से एक को किताबुल्लाह और दूसरे को हिकमत कहा जाता है और हिकमत से मुराद बइत्तिफ़ाक़े उलमा, सुन्नत और हदीसें हैं और जिन पर ईमान लाना और तस्दीक करना अहले इस्लाम का मुत्तफ़क़ा फ़ैसला है।

कुरआन करीम लेख है और हदीस शरीफ़ उसकी व्याख्या है। लिहाज़ा जब तक कुरआन करीम के साथ हदीस और सुन्नत को नहीं मिलाया जायेगा कुरआन शरीफ़ समझ में नहीं आयेगा।

इसी वजह से हज़रत अब्दुर्रहमान इब्ने मंहदी फ़रमाते थे कि आदमी खाने पीने से ज़्यादा हदीस का मोहताज है और हदीस कुरआन करीम की व्याख्या है।

नबी करीम स0अ0 ने दुनिया में तश्रीफ़ लाकर अपनी बात व अमल के ज़रिये कुरआन मजीद की जो व्याख्या की है इसी व्याख्या का नाम हदीस और सुन्नत है। इसलिये सुन्नत की अहमियत बयान करते हुए हज़रत उमर रज़ि0 फ़रमाते थे कि:

"जल्द ही ऐसे लोग आयेंगे जो तुम से कुरआने करीम की आयतों के बारे में झगड़ा करेंगे तो तुम सुन्नत के ज़रिये उनकी पकड़ करना क्योंकि सुन्नत के आलिम ही कुरआन करीम को ज़्यादा समझते हैं।"

ये बात बिल्कुल सही और दुरूस्त है कि सुन्नते नबवी की अस्ल बुनियाद कुरआन पाक है यानि जो कुछ सुन्नत और हदीसों में है उसकी अस्ल कुरआन करीम में मौजूद है चाहे उसका कारण और संबंध हमारे समझ में न आये। इसलिये हज़रत इमाम शाफ़ई रह0 फ़रमाते थे कि नबी करीम स0अ0 ने अपनी सारी ज़िन्दगी में जितने भी फ़ैसले किये हैं वो कुरआन करीम की रोशनी में किये हैं, और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 फ़रमाते हैं कि मैं जब भी तुम्हें कोई हदीस सुनाऊं तो कुरआन करीम से उसकी तस्दीक पेश कर सकता हूं।

हज़राते सहाबा किराम रज़ि0 के सामने जब भी कोई अहम मामला या ज़रूरी मसला पेश आता तो सबसे पहले उसका हल कुरआने करीम में तलाश किया जाता अगर उससे न मिलता तो सुन्नते रसूल स0अ0 की तरफ़ रुख़ किया जाता, और अगर सुन्नत में भी न मिलता तो अहले इल्म के मशवरे से किताब व सुन्नत से उसका हुक्म निकाला जाता।

सुन्नत का बहुत बड़ा फ़ायदा ये है कि इससे नबी करीम स0अ0 से मुहब्बत व इश्क़ का जज़्बा पैदा हो जाता है और फिर यही मुहब्बत दीन व दुनिया में कामयाबी और नेकनामी का ज़रिया बन जाती है।

अल्लाह तआला हम सबको सुन्नतों पर अमल करने का जज़्बा और शौक़ अता फ़रमाये और सुन्नत छोड़ने के वबाल से हम सबकी हिफ़ाज़त फ़रमाये। आमीन

शेष : अनोखा मुक़द्दमा

बुढ़िया ने अपने पल्लू से दोनों आंखे पोछते हुए कहा: "मेरे लिये ये फ़ैसला बड़ा मुश्किल है। हैज़ान मेरी एक आंख है और उसका छोटा भाई मेरी दूसरी आंख है। मां कैसे एक बच्चे के हक़ में और दूसरे बच्चे के ख़िलाफ़ फ़ैसला कर सकती है? मेरे लिये दोनों बराबर हैं।"

क़ाज़ी साहब ने हैज़ान की कमज़ोर माली हालत, जिस्मानी कमज़ोरी और उसके भाई की माली खुशहाली और ख़िदमत व राहत के साधनों की अधिकता को देखते हुए छोटे भाई के हक़ में फ़ैसला सुना दिया। क़ाज़ी साहब का फ़ैसला सुनाना था कि अदालत का कमरा हैज़ान की दर्दनाक चीख़ों और दहाड़े मार–मार कर रोने से गूंज गया। हैज़ान के बिलख़–बिलख़ कर रोने ने क़ाज़ी साहब और अदालत के कमरे में मौजूद सभी लोगों को रुला दिया। क़ाज़ी साहब आंखे पोछते हुए कुर्सी से उठ गये और मीडिया के लोग हैज़ान के गले लग कर रोये। अदालत के कमरे में जब हैज़ान ने मां के पांव छूकर जाने की इजाज़त चाही तो छोटे भाई की भी चीख़ें निकल गयीं।

इस वाक़्ये को पढ़ कर मैं देर तक सोचता रहा। "ओल्ड हाउस" में अपने बेटों के घर से दुत्कारी हुई माओं ने अगर ये पढ़ लिया होता तो उनकी क्या हालत होती? चीख़–चीख़ कर माओं को जवाब देने वाले, उनकी बातों को झुठलाने और हुक्म को टालने वाले, उनकी ख़िदमत में लापरवाही और उनकी देखभाल में कमी करने वाले, बीवियों के हर हुक्म की फ़रमाबरदारी और माओं को नज़रअन्दाज़ करने वाले हैज़ानुल फ़हीदी के इस वाक़्ये को ग़ौर से पढ़ें और सोचें कि अल्लाह तआला ने उनको माओं की शक्ल में कितनी बड़ी नेमत दे रखी है। यक़ीनन दुनिया का सबसे मालदार और खुशहाल वो व्यक्ति है जिसकी मां "ज़िन्दा" है।

दो अज़ीम नेमतें

बेकार कामों की सरपरस्ती

इस बात में शायद कोई इख़्तिलाफ़ की जुर्रत न कर सके कि हमारे दौर में टीवी फ़िल्मों और सीडी/डीवीडी का इस्तेमाल ज़्यादातर बेकार कामों के लिये होता है। साइंस की इन खोजों को तख़रीबी मक़सदों को पूरा करने के लिये इस्तेमाल होता है। इन खोजों को मीडिया के खुशनुमा नाम से पुकारने के बजाय अगर तफ़रीह के साधन कहा जाये तो ज़्यादा अच्छा है। क्योंकि हर व्यक्ति जानता है कि इन यन्त्रों का अधिकतर प्रयोग ड्रामों, फ़िल्मों, नाच गानों और दूसरी बेकार की चीज़ों को देखने के लिये किया जाता है और इन सामानों को केवल तफ़रीह का एक सामान समझा जाता है।

इसी तरह इन यन्त्रों को इस दौर में खेलों को बढ़ावा देने का अहम ज़रिया समझा जाता है। हालांकि इसमें कोई शुब्हा नहीं है कि केवल किक्रेट या हाकी के मैच देख लेने से इन्सान को कोई दीनी या दुनियावी फ़ायदा हासिल नहीं होता। न उसकी सेहत अच्छी होती है और उसे किसी प्रकार की आत्मिक शक्ति प्राप्त होती है। जबकि उसमें लगाव का ये आलम है कि जिस समय किक्रेट या हाकी का लाइव मैच आता है तो माशाअल्लाह मेम्बर पार्ल्यामेंट भी असेम्बली हाल से बाहर निकल निकल कर स्कोर पूछते हैं और कभी कभी असेम्बली हाल में कमेंट्री सुनने में व्यस्त हो जाते हैं। सच बताइये इस क़दर खेलों से लगाव क्या इस्लाम के मिज़ाज के मुताबिक़ है? क्या इस्लाम मुसलमानों को इस क़दर ग़ाफ़िल ही बनाना चाहता है? खूब समझ लीजिये कि तफ़रीह के सिलसिले में इस्लाम की स्पष्ट शिक्षांए मौजूद हैं जिनसे बढ़ जाना भी जायज़ नहीं है। इस्लाम सिर्फ़ उतनी तफ़रीह की इजाज़त देता है जो जिस्मानी तन्दुरुस्ती के लिये फ़ायदेमन्द हो या उसकी विचारों में निखार लाती हो।

हम खेलों के दुश्मन नहीं हम खिलाड़ियों से बेज़ार नहीं। मगर लिल्लाह समय की मांग पर विचार करिये। अपने विवके को जागरूक करिये। क्या आज मुसलमानों को इसी तरह ग़ाफ़िल रखने की ज़रूरत है। अगर आप खेलों को बढ़ावा देना चाहते हैं तो उन खेलों को बढ़ावा दीजिये जो मुसीबत के समय फ़ौजी ट्रेनिंग में काम आयें क्योंकि उन खेलों को खेलना भी सवाब है। हदीस में आता है नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः "दुनिया का हर खेल बातिन है सिवाये तीन के एक ये कि तुम तीर कमान से प्रेक्टिस करो, दूसरे घोड़ों को सधाने के लिये खेलो तीसरे अपनी बीवी के साथ हंसी मज़ाक करो।"

ज़ाहिर है कि उप्रोक्त तीनों खेल लाभकारी और निर्माणी हैं जिनसे बहुत से दीनी और दुनियावी फ़ायदे जुड़े हुए हैं इसलिये तीरन्दाज़ी और घोड़े को सधाना जिहाद में शामिल है और बीवी के साथ हंसी मज़ाक़ सन्तानप्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति है।

इसी तरह आपस में दौड़ लगाना, कुश्ती का मुक़ाबला करना, तैराकी सीखना ऐसे खेल हैं जिनकी इजाज़त खुद हदीसों से साबित है।

अगर कोई शख़्स खेल कूद व तफ़रीह की ज़रूरत महसूस करता है तो उसे वरज़िश करनी चाहिये जिससे उसकी सेहत ठीक हो। मगर घन्टों टीवी के सामने मैच देखने से सिवाये इसके कि इन्सान और सुस्त व नाकारा हो जाये, क्या हासिल होता है।

इस पर तुर्रा ये कि ड्रामें या खेल अगर नमाज़ के दौरान आयें तो नमाज़ या जमाअत के छूटने की वजह बनते हैं। कौन इस हक़ीक़त से इनकार कर सकता है कि सबसे ज़्यादा देखे जाने वाले ड्रामे आम तौर पर जिस समय आते हैं उस समय आम तौर पर इशा की नमाज़ का समय

होता है। बताइये कौन सा आलिम या मोलवी है जो ड्रामे और खेलों में लगकर नमाज़ या जमाअत छोड़ देने की इजाज़त देते हो। ज़ाहिर बात है कि जब नमाज़ छोड़–छोड़ कर इन बेकार के कामों में लगा जायेगा तो ख़ुदा की रहमत की उम्मीद करना किसी भी तरह दुरुस्त नहीं।

समय को नष्ट करना

अल्लाह तआला ने इन्सान को इस दुनिया में बहुत थोड़े से समय के लिये पैदा किया है और हर इन्सान एक छोटी सी ज़िन्दगी लेकर आता है। इस ज़िन्दगी में जितना वक़्त वो अल्लाह की इबादत और फ़रमाबरदारी में गुज़ारे बेहतर है। अपने वक़्त की क़ीमती दौलत को बेकार के कामों में बर्बाद करना बड़ी ही बदनसीबी की बात है। एक हदीस में रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः

''दो नेमते ऐसी हैं जिनके बारे में अक्सर लोग धोखे मे हैं, एक तन्दुरुस्ती और दूसरे मौक़े को ग़नीमत समझना।'' (बुख़ारी)

हक़ीक़त ये है कि तन्दुस्तरी और समय दोनों ऐसी नेमतें हैं जो कभी कभी अचानक छीन ली जाती हैं, तब इन्सान को उनकी क़दर मालूम होती है। एक दूसरी हदीस में इसी सिलसिले में नबी करीम स0अ0 ने और साफ़ बात इरशाद फ़रमायीः ''पांच चीज़ों को पांच चीज़ों से पहले ग़नीमत जानो? बुढ़ापे से पहले जवानी को, बीमारी से पहले तन्दुरुस्ती को, ग़रीबी से पहले अमीरी को, और मौत से पहले ज़िन्दगी को।''

बात ये है कि इन्सान की अस्ल पूंजी और माल इसका समय ही है और ये दुनिया हक़ीक़त में आख़िरत की खेती है इसलिये जो व्यक्ति अपनी इस पूंजी को सही जगह लगायेगा वो फ़ायदे में रहेगा और जो उसे बर्बाद करेगा वो घाटे और नुक़सान में रहेगा इसलिये हदीस में आता है कि नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः ''जो व्यक्ति किसी मजलिस में बैठे और उसमें अल्लाह को याद न करे तो उसकी ये महफ़िल बड़े संकट का कारण होगी और इसी तरह जो शख़्स लेटे और अल्लाह को याद न करे तो ये लेटना उसके लिये बड़े नुक़सान की वजह होगा। (सुनन अबू दाऊद)

इसके अलावा कुछ दूसरी हदीसों से साफ़ तौर पर ये मालूम होता है कि आख़िरत में जन्नत वाले अगर किसी चीज़ पर अफ़सोस करेंगे तो वो अफ़सोस उन लम्हों पर होगा जो उन्होंने दुनिया में इस तरह गुज़ारे होंगे कि उनमें अल्लाह को याद न किया होगा।

ग़ौर करने की बात ये है कि दुनिया में अल्लाह की फ़रमाबरदारी करने और अल्लाह की याद में लगे होने के बजाये अगर वक़्त को फ़िज़ूल और बेकार कामों में ख़र्च किया जाये तो क्या ख़ुदा के यहां जवाब देने से बचा जा सकता है?

इस्लाम से इसलिये डरते हैं

इस्लाम यानि क़ुरआन का शासन अगर ज़मीन के किसी क्षेत्र पर स्थापित हो जाये तो आबकारी विभाग तो उसी दिन परेशानी में पड़ जाये, बड़े–बड़े होटलों से पीने पिलाने की दुकानें बढ़ जायें। शराबियों, अफ़ीमियों, नशाख़ोरों के होश ठिकाने आ जायें। ताड़ी ख़ानों और मय–ख़ानों में झाड़ू फिर जाये, जुए के अड्डों में ताले पड़ जायें, नाच घर उजड़ जायें, अश्लीलता व बेहयाई की ऊंची बिल्डिगों पर धूल उड़ने लगे, ऐक्टरों और ऐक्ट्रसों का बाज़ार ठन्डा हो जाये, "हालीवुड" में फ़ाक़ा करने की नौबत आ जाये, सिनेमा और थियेटरों के पर्दों पर हमेशा के लिये पर्दा पड़ जाये, अदालतों की रौनक़ और वकालत की हलफ़बरदारी जाती रहे, सूदी बैंको और महाजनी कोठियों में कुत्ते लोटने लगें, लाट्रियां पड़ना, दिवाले निकलना, जायदादों का नीलाम क़िस्सा कहानी बन जाये, मुजरिमों की, मजनुओं की, ख़ुदकुशी करने वालों की संख्यां घटते–घटते ज़ीरो हो जाये, चोरों, लुटेरों, क़ातिलों पर दुनिया तंग हो जाये, डिप्लोमेसी की संज्ञा से सम्मान पाने वाली मक्कारियां, और आर्ट व फ़ाइन आर्ट के पर्दे में चमकने वाली बेहयाइयां, सब इस जहां को अलविदा दे जायें।

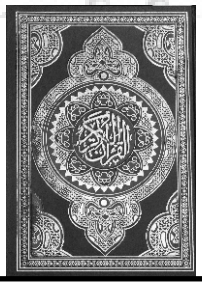

क़ुरआन हकीम

ग़ैर मुस्लिमों की नज़र में

बेहद सहल और अर्थपूर्ण:

"सूरह फ़ातिहा अल्लाह तआला की तारीफ़ की सबसे ज़बरदस्त दुआ है। सहल इतनी कि और व्याख्या से बेनियाज़ मगर उस पर भी अर्थपूर्ण।" (इन्साइक्लो पीडिया ब्रिनाट्का)

बेहद लतीफ़ व पाकीज़ा और बेहद चमत्कारी:

"कुरआन बेहद लतीफ़, और पाकीज़ा ज़बान में है, इस किताब से साबित होता है कि कोई इन्सान इसकी मिसाल नही बना सकता। ये न ख़त्म होने वाला चमत्कार है, मुर्दों को ज़िन्दा करने से कहीं ज़्यादा है।" (सेल)

अर्थपूर्ण और रूह को खुश करने वाला ज़िन्दगी का पैग़ाम:

"कुरआन ऐसा अर्थपूर्ण और रूह को खुश करने वाला पैग़ाम–ए–ज़िन्दगी है कि हिन्दु धर्म और मसीहियत की किताबें इसके मुक़ाबले में कोई बयान पेश नहीं कर सकतीं।" (प्रोफ़ेसर दुवेजा दास)

उच्च अख़लाक़ का बताने वाला:

"कुरआन ने दुनिया को उच्च व्यवहार की शिक्षा दी और दोनों जहानों के उसूल सिखाए।" (लेन पोल)

भाईचारे का रोशन मीनार:

"कुरआन ने मुसलमानों को भाईचारे के बन्धन में बांध रखा है जो नस्ल रंग और ज़बान का पाबन्द नहीं है।" (प्रसिद्ध कहानीकार यच. जी. वेल्ज़)

महान और हसीन:

"अगर हम कुरआन की अज़मत और फ़ज़ीलत और हुस्न व खूबी से इनकार करें तो गोया हम अक़्ल व दानिश से बेगाना होंगे।" (नेरईस्ट अख़बार लन्दन का विशेष अंक)

भाईचारा व समानता का ध्वजवाहक:

"कुरआन की शिक्षा में हिन्दुओं की तरह इम्तियाज़ नहीं है और न ही वो किसी को केवल ख़ानदानी या उच्च स्तर के कारण बड़ा समझा जाता है।" (मशहूर बन्गाली बायू चन्द्रपाल)

बग़ैर किसी बदलाव के:

"कुरआन पाक का कोई हिस्सा, कोई टुकड़ा ऐसा नहीं सुना गया जिसको जमा करने वालों ने छोड़ दिया हो और न कोई शब्द, कोई टुकड़ा ऐसा पाया जाता है जिससे ये मालूम हो कि दाख़िल किया गया है। अगर ऐसी बात होती तो उन हदीसों में जिनमें मुहम्मद स0अ0 की छोटी–छोटी बातें महफ़ूज़ रखी गयी हैं उनका पता ज़रूर चलता।" (विलियम म्योर)

भविष्य की दुनिया का मज़हब:

"कुरआन शरीफ़ ग़ैर मुस्लिमों से पक्षपात और रवादारी करना नही सिखाता है इसके नियमों की पैरवी से दुनिया खुशहाल हो सकती है और दुनिया का आनेवाला मज़हब इस्लाम होगा।" (मिसेज़ सरोजनी नायडू–लन्दन में भाषण)

इन्सानी फ़ितरत के अनुसार:

"मैंने कुरआनी शिक्षा का अध्ययन किया है। मुझे कुरआन को इल्हामी स्वीकार करने में ज़रा भी संकोच नही है। मुझे इसकी सबसे बड़ी खूबी ये नज़र आयी कि ये इन्सानी फ़ितरत के अनुसार है।" (यंग इण्डिया "गांधी")

स्वीकृत सच्चाइयों की छाया:

"वो समय दूर नहीं जब कुरआन करीम अपनी स्वीकृत सच्चाइयों और रूहानी करिश्मों से सबको अपने अन्दर जज़्ब कर लेगा। वो ज़माना भी दूर नहीं कि जब इस्लाम हिन्दु मज़हब पर ग़ालिब आयेगा और हिन्दुस्तान में एक ही मज़हब होगा।" (डॉक्टर रबीन्द्र नाथ टैगोर)

समाजी, राजनीतिक और रूहानी शिक्षक:

"मैं इस्लाम धर्म से प्रेम करता हूं, और इस्लाम के पैग़म्बर को दुनिया का महापुरुष समझता हूं। कुरआन की समाजी, व्यवहारिक और रूहानी शिक्षा का दिल से मुरीद हूं और इसको इस्लाम का बेहतरीन रंग समझता हूं जो हज़रत उमर रज़ि0 के जमाने में था।" (लाला लाजपत राय)

ज़िन्दा जावेद शिक्षाएं:

"1300 बरस के बाद भी कुरआन की शिक्षा का असर ये है

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अमरीकी सेना में आत्महत्या का रूझान

एक निरीक्षण

जंग के मैदान में अपने ज़िम्मेदारियों को अदा करने वाले फ़ौजी दो विभिन्न प्रकार के विचारों के हामी होते हैं "एक प्रोफ़ेशनल" (Professional) दूसरा "पर्सनल" (Personal), प्रोफ़ेशनल तरीक़े से फ़र्ज़ की अदायगी की सबसे बड़ी मिसाल अमरीकी व नाटो सेना है और पर्सनल तरीक़े से अपने फ़र्ज़ अन्जाम देने वाले इराक़ और फिर अफ़ग़ानिस्तान में मुक़ाबला करने वाले मुजाहिदीन हैं, और ये एक सत्यता है कि आज तक पूरे इस्लामी इतिहास में किसी एक मुजाहिद या इस्लामी फ़ौजी ने न तो खुदकुशी की और ना तनाव का रोगी हुआ, जबकि इसके बिल्कुल विपरीत अमरीकी फ़ौजी दिन प्रतिदिन दिमाग़ी मरीज़ बन रहे हैं और खुदकुशी करने पर मजबूर हो रहे हैं। मीडिया में ये बात आम हो रही है कि अमरीकी फ़ौजें जंगों से तंग आ चुकी हैं, डर व ख़ौफ़ के माहौल में वो अपना मानसिक संतुलन खो रहे हैं और अन्जाने भय से घबराकर आत्महत्या करने पर मजबूर हैं। आज अमरीका के अस्पतालों में 80 प्रतिशत संख्या उन दिमाग़ी मरीज़ों की है जो अफ़ग़ान व इराक़ की जंगों में हिस्सा ले कर लौट चुके हैं।

ये कितनी अजीब बात है कि वो फ़ौजी जिनके जीवन का उद्देश्य ही विजयी होना या हंसते–हंसते मौत को गले लगाना होता है, जिनकी निगाहों के सामने उनके देश व क़ौम का सम्मान और उसकी सीमाओं की सुरक्षा होती है, वो इस प्रकार की बीमारियों का शिकार हो जायें और जंग के मैदान से उनकी तबियत उकता जाये....!!

इसका एक आधारभूत कारण ये है कि जंग शुरू होने से पहले ये फ़ौजी अमरीका के शो–पीस थे, उन्होंने कभी किसी सख़्त मुहिम में हिस्सा नहीं लिया था, अमरीकी जरनलों ने उनके साथ ग़लतबयानी की, उन्हें हरियाली दिखायी और एक बड़ी संख्या को युद्ध का प्रशिक्षण सम्पूर्ण होने से पहले किसी तरह अफ़ग़ानिस्तान जाने पर राज़ी कर लिया, अमरीकी प्रशासन ने इन फ़ौजियों को विशेष सुविधांए भी दीं, इन फ़ौजियों की दिलचस्पी के सभी साधन उपलब्ध कराये, हर फ़ौजी दस्ते के साथ मानसिक चिकित्सा विशेषज्ञों की एक टीम तय की लेकिन तन्ख़्वाहों पर काम करने वाले इन फ़ौजियों को वहां पहुंचकर जिस स्थिति का सामना करना पड़ा उसने उनके होश उड़ा दिये और वो मानसिक तनाव (Depression) का शिकार होने लगे और फिर विभिन्न बहानों के ज़रिये अपने घर लौटने की कोशिश करने लगे।

एक रिपोर्ट के अनुसार आत्महत्या का शिकार अधिकतर वो सैनिक होते हैं जो छुट्टियों में अपने घर आते हैं और उन्हें दोबारा जंग पर जाने का आदेश मिलता है, या वो सैनिक जो घर आकर किसी तरह वापस तो चले जाते हैं लेकिन घर की याद और जंग के मैदान की तबाहियों से निढाल हो जाते हैं।

आज अमरीका जिस स्थिति का सामना कर रहा है उसको इसका अन्दाज़ा भी नहीं था, इन जंगों ने इसे बहुत कुढ़न और कठिनाइयों में डाल दिया है, माली तौर से उठने वाले ख़र्चे अपनी जगह। अब अमरीकी सेना ने अफ़ग़ानिस्तान की तैनाती के आदेश को मानने से इनकार करना भी शुरू कर दिया है जिसके कारण वहां की आम स्थिति असाधारण दबाव, और अब तक किसी विशेष सफलता के प्राप्त न होने के कारण अत्यधिक मानसिक तनाव का शिकार है, जिसके परिणाम में ज़बरदस्ती सुकून हासिल करने की ख़ातिर नशा और नींद की गोलियों का इस्तेमाल आम है। अब तक शायद अत्यधिक तनाव, मानसिक रोगों और बेचैनी की कैफ़ियत इन सैनिकों में आम थीं, किन्तु हालिया वर्षों में सैनिकों की आत्महत्या के बढ़ते हुए रूझान ने अमरीकी प्रशासन को झिंझोड़ कर रख दिया है।

पिछले पांच सालों में आत्महत्या के रूझानों में बहुत तेज़ी आ गयी है। इससे पहले 1990–91 ई0 में खाड़ी युद्ध के दौरान लगभग 102 सैनिकों ने आत्महत्या की थी जो इतिहास का सबसे भयावह प्रतिशत था, लेकिन अफ़ग़ान व इराक़ की जंग में ये प्रतिशत कई गुना बढ़ गया है। स्वंय

अमरीकी संस्थाओं की रिपोर्ट के अनुसार 2005ई0 में 87 सैनिकों ने आत्महत्या की थी, 2006ई0 में ये संख्या बढ़ कर 99 तक पहुंच गयी, 2008ई0 में आत्महत्या का प्रतिशत इतिहास के सबसे अधिक प्रतिशत पर पहुंच गया और पेंटागन ने 128 की संख्या दर्ज की, पिछले एक माह के दौरान 38 से अधिक सैनिक आत्महत्या कर चुके हैं। 2012ई0 के आरम्भिक कुछ महीनों के दौरान औसतन 33 सैनिक जंग के महाज़ पर विभिन्न कारणों से आत्महत्या कर चुके हैं।

जबकि इनमें उन वाक़्यों को शामिल नहीं किया गया है जिनके बारे में ये यक़ीन नहीं था कि ये मौतें आत्महत्या का परिणाम हैं या किसी और कारण का। पेंटागन के प्रवक्ता ने इस बात को भी स्वीकार किया है कि 90 प्रतिशत पेन्डिंग केस बाद में आत्महत्या ही साबित होते हैं।

अफ़ग़ानिस्तान में जंग की ज़िम्मेदारी अदा करके वतन वापस आने के बाद लगभग 20 प्रतिशत फ़ौजी मानसिक रोगों का शिकार हो जाते हैं, इससे पूर्व 1960ई0 की दहाई के आख़ीर में वियतनाम जंग से लौटने वाले फ़ौजियों को भी इस प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ा था। अमरीकी सिपाहियों ने जब ख़ुद अपने साथियों की वहशियाना कार्यवाहियां देखीं तो वो मानसिक असंतुलन का शिकार हो गये। मानसिक असंतुलन सर का दर्द बन जाता है लेकिन इसमें दर्द की गोलियां खाकर नजात नहीं पायी जा सकती है।

अमरीकी सेना में आत्महत्या का रूझान नया नहीं है, पिछले 25 बरसों में ये रूझान घटता–बढ़ता रहा है। इस संदर्भ से होने वाली खोजों में सैनिकों की आत्महत्या के रूझान को एक लाख फ़ौजियों में औसत के हिसाब से जांचा जाता है, 1985ई0 में जब ये औसत 15.8 प्रतिशत था जो कि उस समय का सबसे अधिक औसत था, ये औसत 2001ई0 में 9.1 प्रतिशत हो गया जो कि बहुत कम और अमरीकी प्रशासन का हौसला बढ़ाने वाला था, इसी प्रकार 1993ई0 में ये औसत 14.2 प्रतिशत रहा जो बढ़ता हुआ 20. 2 तक पहुंच गया, लेकिन पिछले सालों में ये औसत तेज़ी से बढ़ता रहा और 2012 ई0 में ये औसत 29.1 प्रतिशत तक पहुंच गया जिसने अमरीकी शासन को परेशान कर रखा है। इस पेचीदा हालात से निपटने के लिये इतिहास की लम्बी व मंहगी योजना पर कार्य शुरू किया गया, इसके लिये पचास मिलियन डालर की बड़ी रक़म निश्चित कर दी गयी ताकि फ़ौजियों में आत्महत्या के बढ़ते हुए रूझान पर शोध किया जा सके और सैनिकों को इस बात का प्रशिक्षण दिया जाये कि जंग की हालत में पैदा होने वाले मानसिक तनाव का सामना कैसे किया जाये?

अब तक कि रिपोर्टों से ये बात साफ़ हो चुकी है कि इराक़ व अफ़ग़ानिस्तान में तैनात सैनिकों की आत्महत्या का कारण वहां पर लगातार असफलता का सामना, लगातार तनाव की कैफ़ियत का शिकार रहना, वतन और परिवार से दूरी का एहसास, अपनी निगाहों के सामने दोस्तों की तड़पती हुई लाशों को देखना, और स्वंय के भविष्य का अन्धकारमय होना है। यहां विचार करने वाला पहलू ये है कि किसी देश की फ़ौज में जिन नौजवानों की भर्ती होती है वो आम जवानों से अलग होते हैं, उनके इरादे व उद्देश्य व हौसले बुलन्द होते हैं, जिसके लिये शासन उनको विशेष प्रशिक्षण भी देता है और एक बड़ा आर्थिक बजट उन पर ख़र्च भी करता है, जब ऐसी ट्रेनिंग और नये असलहों से लैस होने के बाद उनमें आत्महत्या का रूझान तरक़्क़ी पा रहा है तो यक़ीनन उनकी मानसिक स्थिति व तनाव की कैफ़ियत एक आम इन्सान की समझ से कहीं बढ़ कर है।

इन वाक़्यों का एक आधारभूत कारण ये भी है कि उन सैनिकों को ऐसे दुश्मन का सामना करना है जिनके बारे में उन्हें केवल ये पता है कि वो इराक़ या अफ़ग़ानिस्तान में मौजूद हैं, उनके पास उनकी पहचान के लिये कोई तरीक़ा नहीं है, इसलिये जब वो गलियों में मार्च कर रहे होते हैं तो उन्हें इस बात का यक़ीन नहीं होता कि सामने वाला व्यक्ति देश का आम नागरिक है या अमरीका का वांछित "आतंकवादी" किसी खुले दुश्मन से लड़ना आसान होता है लेकिन दुश्मन की खोज में गली–गली चक्कर लगाना बहुत मुश्किल काम है, जिसके परिणाम में दुश्मन मिले या न मिले मगर दुश्मन की तलाश में जुटा सैनिक अवश्य मानसिक तनाव का शिकार हो जाता है।

अगर अफ़ग़ानिस्तान की जंग और कुछ साल जारी रहती है तो इसमें कोई शक नहीं कि अफ़ग़ान मुजाहिदीन को पागलों और ज़हनी बीमारों से जंग लड़नी पड़ेगी। इन जंगों के कारण अमरीका की अर्थव्यवस्था बुरी तरह प्रभावित हो चुकी है और अब व्यक्तियों की ताक़त भी कमज़ोर होती जा रही है। अगर स्थिति में बदलाव के प्रयास न किये गये तो हालात इस बात की गवाही दे रहे हैं कि अमरीका का अन्जाम सोवियत यूनियन से भिन्न नहीं होगा, लेकिन अमरीका को कौन समझाये?!

जबान की नेकियां

बिना सोचे समझे कोई बात नहीं कहनी चाहिये

हुज़ूर स०अ० की बातों से मालूम होता है कि ज़बान मानव अंगों में बड़ी ताक़त व प्रभाव रखती है और इसकी ज़रा सी लापरवाही से दुनिया व आख़िरत में बड़ा वबाल होता है। इसी लिये इसकी हिफ़ाज़त बहुत ज़रूरी है। अल्लाह तआला ने इसकी हिफ़ाज़त का हुक्म दिया है और इसकी निगेहबानी करने वाला तय किया है कि एक–एक शब्द सुरक्षित हो जाये।

अल्लाह का इरशाद है: "इन्सान ज़बान से कोई बात नहीं निकालता मगर उसके लिये एक निगरां तैयार है।" (सूरह क़ाफ़)

हमारे लिये ज़रूरी है कि हम जो बात ज़बान से निकालें खूब सोच–समझ कर निकालें। बात कहें तो सच्ची और अच्छी कहें वरना ख़ामोश रहना बेहतर है।

हुज़ूर अक़दस स०अ० ने फ़रमाया: "जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता है उसको चाहिये कि बात कहे तो बेहतर कहे वरना ख़ामोश रहे।" (बुख़ारी व मुस्लिम)

हमारा एक बड़ा फ़र्ज़ ये है कि बहुत से बातें हम बे सोचे समझे कह जाते हैं और इसका एहसास नहीं होता कि ये बात हमको कहां ले जा रही है और इसका क्या परिणाम आयेगा। कई बार एक छोटी सी बात कहने वाले को जन्नत पहुंचा देती है और कई बार जहन्नम का रास्ता दिखा देती है और कहने वाले को अपने अन्जाम की ख़बर तक नहीं होती।

हुज़ूर स०अ० का पाक इरशाद है: "बन्दा कई बार ऐसी बात बोल जाता है जिससे अल्लाह की रज़ा हासिल हो जाती है मगर उसकी अहमियत नहीं मालूम होती। इस बात के ज़रिये अल्लाह तआला उसके दर्जों को बुलन्द कर देता है और कोई बन्दा ऐसी बात कह बैठता है कि जिसके कहने से अल्लाह तआला का गुस्सा नाज़िल होता है और उसको कुछ ख़बर नहीं होती कि इसके कारण वो आग में जा रहा होता है।" (बुख़ारी)

जब एक बात इन्सान को कहीं से कहीं पहुंचा देती है तो जिन लोगों को बहुत ज़्यादा बोलने की बीमारी है उनका क्या हाल होता होगा। इसलिये ज़्यादा बातचीत करने से बचना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। बेकार की बातें बड़े फ़ितनों और फ़सादों का दरवाज़ा खोलती है और इसका ख़मियाज़ा कई बार दुनिया में भुगतना पड़ता है और आख़िरत में तो लाज़िमी भुगतना होगा।

"तुम अल्लाह के ज़िक्र के अलावा ज़्यादा बात न किया करो, ज़्यादा बोलना दिल को सख़्त कर देता है और सख़्त दिल आदमी अल्लाह तआला से बहुत दूर है।" (तिरमिज़ी)

अल्लाह तआला ने इस ज़बान में बहुत सी खूबियां रखीं हैं और बहुत से ऐब। हर ख़ूबी व ऐब की निशानदेही कुरआन शरीफ़ और हदीस पाक में की गयी है और इस सिलसिले में बहुत सी हिदायतें दी गयी हैं।

अल्लाह तआला लिखने वाले और पढ़ने वाले को अपनी मर्ज़ी पर चलाये और ज़बान की हिफ़ाज़त करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन!

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly

Arafat Kiran

Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME 4

DECEMBER 2012

ISSUE 12

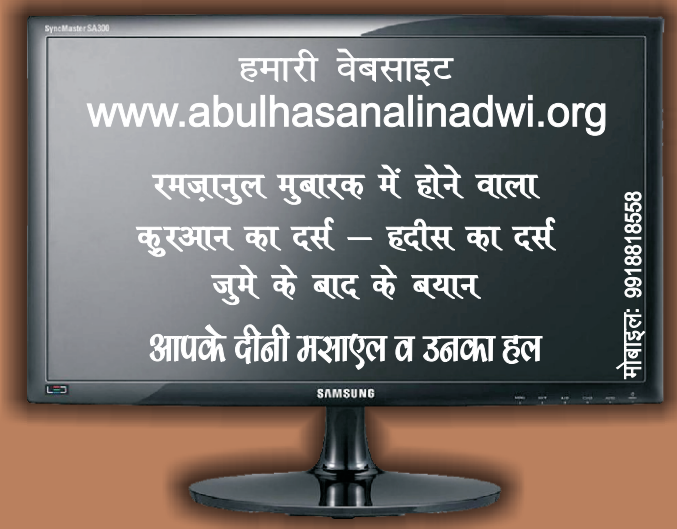

इस पेज पर विज्ञापन देकर अपने कारोबार को बढ़ावा दें। सम्पर्क करें: 9918818558

Designed by Mohammad Makky Hasani Nadvi

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi

MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.